INTERNATIONAL MAGAZINE
RNI NO. 68884/96

Postal Regd. No. CHD/0082/2018-20

Date of Publishing : 23/05/2019
Page No. From 1 to 68
Date of Posting
Last Date of Every Month
Posted by MBU

30/-

ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीअै एकु एकु वखाणीअै ।।
आतम पसारा करण हारा प्रभ बिनां नहीं जाणीअै ।।

आत्म मार्ग

June 2019

गुरू अरजुन परतख हरि ॥

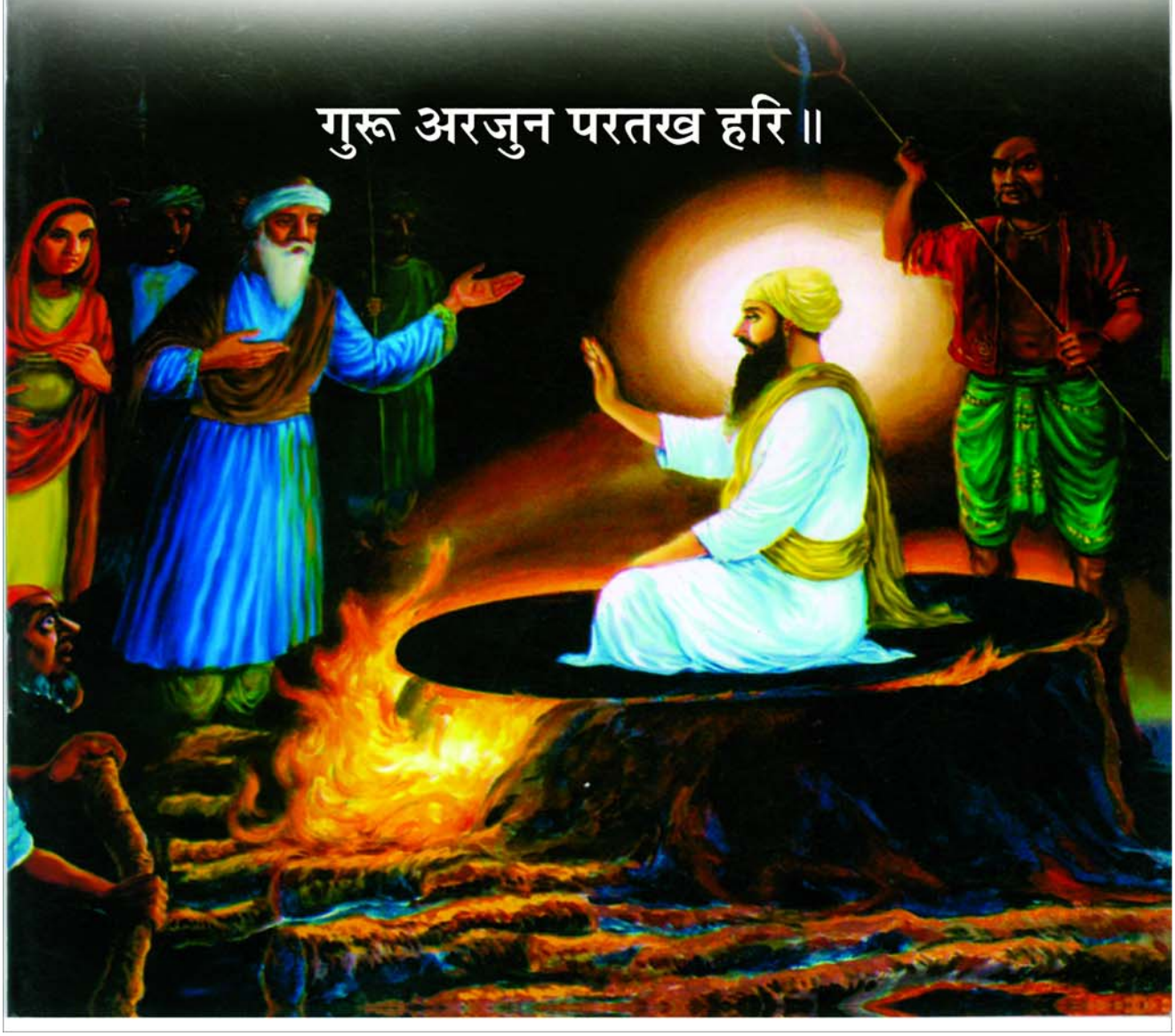

इंग्लैंड – गुरमति समागम

17 मई से 3 जून 2019 तक

द्वारा – सन्त बाबा लखबीर सिंह जी

(वर्तमान मुखी, ट्रस्ट रतवाड़ा साहिब)

ब्रह्मलीन सन्त बाबा वरियाम सिंह जी महाराज
रतवाड़ा साहिब

: कार्यक्रम :

1. Place : Sri Guru Singh Sabha Gurdwara, Icknield Way, Letchworth SG6 1EF
   Date : Sat 18 May
   Time : 10.45am.

2. Place : Guru Nanak Gurdwara, High Street, Smethwick,B66 3AP
   Date : Sat 18 May
   Time : 7pm to 8.30pm

3. Place : Guru Nanak Gurdwara, Dallow Road, Luton LU1 1LY
   Date : Sun 19 May
   Time : 11.15am to 12.45pm

4. Place : Great Denham, Bedford
   Date : Sun 19 May
   : 6.30pm -

5. Place : Kempston. Bedford
   Date : Mon 20 May
   Time : 6.30pm

6. Place : Guru Amar Dass Gurdwara Southall.
   Date : Sat 25th May
   Time : 11.30am

7. Place : Guru Nanak Gurdwara, Old Ford End Road, Bedford MK40 4JX
   Date : Sun 26 May
   Time : 11am to 12.15pm

8. Place : Karamsar Gurdwara, High Road, Ilford, IG1 1TL
   Date : Sun 26 May
   Time : 7pm to 8.15pm:

9. Place : Karamsar Gurdwara, High Road, Ilford, IG1 1TL
   Date : Mon 27 May
   Time : 7pm to 8.15pm

10. Place : Gurdwara Guru Nanak Parkash, Harnall Lane W, Coventry CV1 4FBA
    Date : Weds 29 May
    Time : 7pm to 8.30pm:

11. : Guru Panth Parkash Gurdwara, Ashford Road, Leicester LE2 6AA
    Date : Fri 31 May
    Time : 7pm to 8.30pm

12. Place : Guru Panth Parkash Gurdwara, Ashford Road, Leicester LE2 6AA
    Date : Sat 1st June
    Time : 7pm to 8.30 pm

13. Place : Bedford
    Date : 2nd June

14. Place : Bedford
    Date : 3rd June

FOR FURTHER INFORMATION PLEASE CONTACT :

Bhai Jatinder Singh
0 785 048 9499

Bhai Gurmukh Singh
0 798 954 0033

Bhai Manraj Singh (Midlands)
0 789 697 2725

सन्त बाबा लखबीर सिंह जी
रतवाड़ा साहिब

आत्म मार्ग

वर्ष चौबीसवां - अंक पाँचवां, जून 2019

गुरद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब

संचालक

श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी महाराज (ब्रह्मलीन)
तथा संत माता (बीजी) रणजीत कौर जी (ब्रह्मलीन)

चेयरमैन
सन्त बाबा लखबीर सिंह जी

एडिटर-इन-चीफ
सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

प्रबन्ध सम्पादक
भाई (डा.) सुखविंदर सिंह

मुख्य सम्पादक
डा. जगजीत सिंह

मासिक पत्रिका न पहुँचने सम्बन्धी पूछताछ

यदि आपको माह की 15 तारीख तक आत्म मार्ग पत्रिका प्राप्त नहीं हो पाती है तो आप कृप्या निम्नलिखित सम्पर्क नम्बरों पर कार्यलय समय प्रातः 10.00 बजे से सायं 6.00 बजे तक सम्पर्क करने की कृपा करें -

सम्पर्क न. - **84378-12900, 94172-14391, 94172-14379**

Email : atammarg1@yahoo.co.in

Postal Address for any Enquiry, Money Order's :

'ATAM MARG' MAGAZINE
Gurdwara Ishar Parkash, Ratwara Sahib (New Chandigarh) P.O. Mullanpur Garibdas, Teh. Kharar, Distt. S.A.S. Nagar (MOHALI) - 140901, Pb. India

SUBSCRIPTION - शुल्क (देश)

वार्षिक	आजीवन सदस्यता	प्रति कापी
300/-	3000/-	30/-
320/-	3020/-	(For outstation cheques)

SUBSCRIPTION FOREIGN (विदेश)

	Annual	Life
U.S.A.	60 US$	600 US$
U.K.	40 £	400 £
Canada	80 Can $	800 Can $
Australia	80 Aus $	800 Aus $

प्रकाशन के समस्त अधिकार सुरक्षित हैं।

प्रकाशक, मुद्रक एवं सम्पादक सन्त बाबा हरपाल सिंह जी ने 'आत्म मार्ग' जै आफ सैट प्रिंटर्ज, 905 इन्डस्ट्रियल एरिया, फेज़-2, चण्डीगढ़ से छपवा कर मुख्य कार्यालय 'आत्म मार्ग' रतवाड़ा साहिब, डाकखाना मुल्लांपुर, तहसील खरड़, एस.ए.एस. नगर (मोहाली), पंजाब से प्रकाशित किया।

Please visit us on internet at :-
For Atam Marg Email : atammarg1@yahoo.co.in,
Website & Live video -

www.ratwarasahib.in
www.ratwarasahib.org } **(Every sunday)**

Email: sratwarasahib.in@gmail.com

विदेशों में आत्म मार्ग की शाखाएँ

अमेरिका - भाई अमरदीप सिंह अटवाल
फोन तथा फैक्स : 001-408-263-1844

कैनेडा - भाई सरमुख सिंह पंनू, वैनकूवर
फोन : 001-604-433-0408

भाई तरसेम सिंह बैंस - मोबाइल 001-604-862-9525
फोन : 001-604-288-5000

भाई जसबीर सिंह राणू - फोन : 001-604-589-9189

इंगलैंड - बीबी गुरबख्श कौर तथा भाई जगतार सिंह जग्गी
फोन:0044-121-200-2818 फैक्स :0044-121-200-2879,
भाई अरविंदर सिंह (राज) मोबाइल:0044-7968734058

आस्ट्रेलिया : बीबी जस्प्रीत कौर: मोबाइल-0061-406619858

रतवाड़ा साहिब की संस्थाओं के सम्पर्क नम्बर

* आत्म मार्ग मैगज़ीन (पंजाबी, हिन्दी तथा अंग्रेजी)
9417214391, 9417214379, 8437812900

* गुरू गोबिंद सिंह विद्या मन्दिर सीनियर सैकण्डरी स्कूल
(CBSE) - 0160-2255003

* माता साहिब कौर मुफ्त सिलाई सैंटर - **96461-01996**

* सन्त वरियाम सिंह मैमोरियल पब्लिक सीनियर सैकण्डरी स्कूल
(PSEB) अंग्रेजी माध्यम - **95920-55581**

* सन्त वरियाम सिंह चैरिटेबल अस्पताल (मुफ्त)
98786-95178, 92176-93845

* इंटरनैशनल डिवाइन स्कूल आफ़ नर्सिंग -
94172-14382

* इंटरनैशनल डिवाइन कालेज आफ़ ऐजूकेशन (बी. एड.)
94172-14382

* अकाल वृद्ध आश्रम (मुफ्त) **98157-28220**

विशेष जानकारी के लिए

श्री मान जी	-	98551-32009
श्री आखण्ड पाठ साहिब बुकिंग	-	94647-12900
आडियो-वीडियो लाईब्रेरी	-	98728-14385, 98555-28517
केवल टी.वी. नेटवर्क	-	94172-14385

अन्य सम्पर्क नम्बर
98889-10777, 96461-01996, 9417214381

विषय-सूची

1. सम्पादकीय 5
   भाई (डा.) सुखविन्दर सिंह

2. बारहमाहा 7
   सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

3. श्री गुरू अरजन देव जी, योगिराज को उपदेश 10
   सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

4. भाई जमाल जी को गुरू हरिगोबिन्द साहिब जी के द्वारा अनुभवी मार्ग दर्शन 19
   सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

5. बाबाणियाँ कहानियाँ 30
   सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

6. जनम मरण दुहहू महि नाही ... 34
   सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

7. नूरानी जीवन की झलक 38
   (प्यारे महापुरुषों के जन्म दिवस पर विशेष)
   भाई (डा.) सुखविन्दर सिंह

8. गुरू अरजुन परतख हरि 45
   डा. जगजीत सिंह

9. गुरबाणी अर्थ भण्डार 48
   सन्त हरी सिंह जी 'रन्धावे वाले'

10. वारां भाई गुरदास जी 50
    डा. भाई बीर सिंह जी

11. स्वामी राम जी के प्रेरणात्मक विचार 52
    डा. स्वामी राम जी

12. विशेष जानकारी - बैंक खाता, आत्म मार्ग मैगजीन सदस्यता प्रारूप, अस्पताल जानकारी, तथा पुस्तक सूची 55

सम्पादकीय

(डा.) भाई सुखविन्दर सिंह

हरि का भाणा मंनहि से जन परवाणु ॥
गुर कै सबदि नाम नीसाणु ॥ ***अंग - 1129***

दुनिया के इतिहास के अन्दर अनेकों घटनाएँ घटित हुई हैं। इन घट चुकी घटनाओं में से कुछेक ऐसी हैं जो कि मानवता के लिए मार्गदर्शक, प्रेरक व दिशा निर्देश देने वाली हैं। इसी प्रकार से जून का महीना सारी मानवता के लिए विशेष सन्देश लेकर आता है। इस माह में निरंकार की पाँचवीं ज्योति शहीदों के सिरताज धन्य श्री गुरू अरजन देव जी महाराज ने ऐसी करनी की कि आने वाली नस्लों, मजहबों तथा आत्म मार्ग के जिज्ञासुजनों के लिए प्रेरणा का श्रोत बनी रहेगी। भले ही सारा सिक्ख इतिहास, इस प्रकार की विलक्षण घटनाओं से भरा पड़ा है, जिनके द्वारा इस कौम की अपनी मुँह बोलती तस्वीर प्रकट होती है। गुरमति का यह एक विशेष सिद्धान्त है कि जो कुछ दूसरों को प्रेरित करने वाला हो, पहले स्वयं व्यवहारिक रूप से उसके ऊपर चलकर दिखलाया जाए। निरंकारी इलाही गुरू ज्योति श्री गुरू नानक देब जी के रूप में पहले शरीर में प्रकट होती है। दस स्वरूप पवित्र शरीरों के धारण करने के बाद अब ग्याहरवें स्वरूप श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी जन साधारण का कल्याण कर रहे हैं, प्रत्येक प्रकार की कृपाएँ कर रहे हैं। निःशंक रूप से गुरू शरीर नहीं है बल्कि ज्योति है और पृथक-पृथक शरीरों में एक ही ज्योति ने पृथक-पृथक कार्य किए हैं। 'इका बाणी इकु गुरु सबदु वीचारि।। (अंग - 646) इन किए गए समस्त कार्यों का सिद्धान्त एक ही है। लेकिन समय-समय पर सतगुरू जी ने जो कुछ भी जन साधारण को प्रदान करना था, पहले उसके ऊपर चलकर मुख्य मार्ग बनाया, स्वयं करके दिखलाया और भविष्य के लिए मील के पत्थर स्थापित कर दिए। सिक्खी रूपी फुलवाड़ी ने जन-साधारण को खूशबू देनी थी, गुणों रूपी गलदस्ते ने खूशबू बाँटनी थी, इसलिए इस खूशबू तक पहुँचने के लिए इसमें पृथक-पृथक रंगों के फूलों को खिलाना जरूरी था। इस पौधे को श्री गुरू नानक देव जी ने अपने कर कमलों के द्वारा लगाया और बाद वाले गुरुओं ने इसे प्रफुल्लित करने के लिए पृथक-पृथक प्रकार की खुराक इसे प्रदान की। पाँचवें सतगुरू जी ने शहीदी का खून डालकर इसे सींचा। शहीदी के अर्थों से स्पष्ट होता है कि 'सत्य की गवाही' सत्य की ऐसी मिसाल स्थापित की कि यह सत्य गवाही के रूप में संसार के अस्तित्व के अन्तिम पल तक, विलक्षण रूप में कायम रहेगा। सच्चे पातशाह श्री गुरू नानक देव जी के पाँचवें स्वरूप धन्य श्री गुरू अरजन देव महाराज जी की शहीदी के, भले ही अनेकों कारण घरेलू, राजनैतिक तथा सामाजिक हो सकते हैं लेकिन विशेष कारण जो था, वह सत्य को सदजीवत रखना ही था। जहाँगीर बादशाह की आत्म जीवनी में से इतिहास के अन्दर यह बात स्पष्ट है कि वह इस सत्य रूपी फूलों की पिटारी को देखना ही नहीं चाहता था। यह सत्य का मार्ग श्री गुरू नानक देव जी से शुरू होकर पाँचवीं ज्योति तक पहुँच चुका था। मानवता को प्यार करने वाले परमात्मा के प्यारे, इस मार्ग के संगत रूप में पथिक बन चुके थे। दूसरा विशेष पक्ष था कि 'धुर की बाणी' आदि ग्रन्थ साहिब जी के रूप में प्रकाशमान होकर आम जनता के उद्धार का माध्यम बन चुकी थी। जहाँगीर के कथनों के अनुसार वह इस सत्य के प्रकाश को अन्धकार में बदलना चाहता था। सूर्य का उदय होता देखकर उल्लू ने घबराना ही था। इसे अन्धकार में बदलने के लिए उसने प्रत्येक प्रकार के तरीके प्रयोग करने शुरू कर दिए। आखिर में पाँचवें पातशाह जी ने अपनी शहादत देकर इस सत्य के प्रकाश को सद जीवत रखा। शहीदी का प्रभाव ऐसा पड़ा कि और भी अन्धेर कोठरियों तक यह प्रकाश पहुँचना शुरू हो गया। छठे महाराज के द्वारा मीरी-पीरी व सन्त-सिपाही का सिद्धान्त प्रकट होना शुरू हो गया। वह सत्य को जितना अधिक ढकने की कोशिश करता है, वह उतना ही अधिक फैलता है। यह सत्य श्री गुरू नानक देव जी से फैलना शुरू हुआ और आज तक फैलता आ रहा है तथा सृष्टि के अस्तित्व के अन्तिम पल तक इसने फैलते ही रहना है -

सचु पुराणा ना थीऐ नामु न मैला होइ ॥
अंग - 1248

साहिबु मेरा नीत नवा सदा सदा दातारु ॥
अंग - 660

एक तो यह सन्देश था जो कि सच्चे पातशाह जी ने

अपनी शहादत देकर सदा के लिए इस सन्देश को अमर रखा, तभी तो आप जी को शहीदों के सिरताज कहकर सम्मानित किया जाता है। दूसरा पक्ष यह है कि परमेश्वर की रजा में से अनेकों आशीर्वादों ने प्रकट होना है। अमृत, सुख, ज्ञान, ध्यान, स्वीकार्य पदवी, हुक्म, रजा एक नहीं बल्कि अनेकानेक कृपाएँ, परमात्मा की रजा में रहकर ही प्राप्त होती हैं -

जा तिसु भावै ता हुकमु मनावै ॥
इस बेड़े कउ पारि लघावै ॥ *अंग - 337*

हरि कै भाणै जनु सेवा करै बूझै सचु सोई ॥
हरि कै भाणै सालाहीऐ भाणै मंनिऐ सुखु होई ॥
अंग - 365

तेरे भाणे विचि अंम्रितु वसै
तूं भाणै अंम्रितु पीआवणिआ ॥ *अंग - 119*

जो तुधु भावै सो परवाणु ॥ तेरे भाणे नो कुरबाणु ॥
अंग - 676

भाणा मंने सो सुखु पाए भाणे विचि सुखु पाइदा ॥
अंग - 1063

तेरा कीआ मीठा लागै ॥
हरि नामु पदारथु नानकु माँगै ॥ *अंग - 394*

वास्तव में गुरू महाराज जी ने स्वयं रजा में राजी रहकर सांतकी शहीदी प्राप्त की। उन्होंने हमारे लिए एक विलक्षण मार्ग तैयार करके दिया कि गुरू का सिक्ख किसी भी प्रकार के दुख-सुख को देख डोलायमान नहीं होता है क्योंकि वह 'ऐहि भि दाति तेरी दातार।। अंग - 9' समझता हुआ 'जे सुख देहि त तुझहि अराधी दुखि भी तुझै धिआई।। जे भुख देहि त इत ही राजा दुख विचि सूख मनाई।। तनु मनु काटि काटि सभु अरपी विचि अगनी आपु जलाई।।' (अंग - 757) के सिद्धान्त का अनुसरणकर्ता बना रहता है और इस प्रकार के अनेकों प्रमाण गुरवाणी में मिलते हैं। सच्चे पातशाह जी के शहीदी के संकल्प पर चलते हुए सिक्ख पन्थ के अन्दर एक नहीं बल्कि अनेकों शहीदियाँ हुईं। जान को तली पर रखकर शूरवीर योद्धागण स्वयं आगे होकर शहादतों का जाम पी गए। आज वह शहीदियाँ आने वाली नस्लों के लिए प्रकाश स्तम्भ हैं, प्रेरक हैं, मार्ग दर्शक हैं। अतः सच्चे पातशाह जी ने कौम को सदा के लिए, प्रत्येक प्रकार के सुमेल के समय बुलन्दावस्था में रखने के लिए तथा सत्य को सदजीवत रखने के लिए स्वयं शहीदी दी तथा शहीदों के सिरताज बने। आप जी की पावन वाणी श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर शोभायमान है।

जपउ जिनु अरजुन देव गुरु
फिरि संकट जोनि गरभ न आयउ ॥ *अंग - 1409*

जिन्होंने भी सच्चे पातशाह पर प्रेम, वैराग्य तथा श्रद्धा वाला निश्चय रखा वे जन्म-मरण के चक्करों से खलासी पा गए। आप जी की पावन वाणी में से 'सुखमनी साहिब' की वाणी गुरसिक्खों के नित्तनेम का हिस्सा बन चुकी है। कितने ही जिज्ञासुजन इस वाणी को पढ़कर अपने आप को शान्त करने के लिए सुख-शान्ति प्राप्त कर रहे हैं। आप जी की वाणी तथा शहीदी तृप्त हृदयों को शीतल करने का अनुपम कार्य करती है। इस लोकाई को शाश्वत ठंडक पहुँचाने के लिए आप जी ने अपने शरीर पर गर्म-गर्म रेत, गर्म-गर्म पानी तथा गर्म-गर्म (दहकती हुई) लोहे की तवी की तपिश को सहन किया। आप जी ने ऐसी तपिश सहन की कि सारी लोकाई को शान्ति प्रदान कर दी। इस प्रकार का सन्देश, जून का महीना सारी लोकाई को प्रत्येक वर्ष प्रदान करता है। श्रद्धालुजन सच्चे पातशाह जी की याद में छबीलें आदि लगवा कर अपने गुरू को श्रद्धा व प्रेम का आकीदा भेंट करते हैं। इस प्रकार का सिक्खी का गुलदस्ता तैयार हुआ कि इसमें से जहाँ अन्य अनेकों प्रकार की खूशबू है, वहीं इसमें से रजा में राजी रहने की खूशबू भी प्राप्त हुई।

पाँचवें महाराज जी की शहादत के कारण जून का महीना जहाँ पूरी मानवता के लिए विशेष है, वहीं रतवाड़ा साहिब के साथ जुड़ी हुई संगत के लिए और भी विशेष हो जाता है क्योंकि इस महीने में जहाँ सच्चे पातशाह जी की याद में शहीदी समागम आयोजित किए जाते हैं, वहीं पर रतवाड़ा साहिब ट्रस्ट के संस्थापक प्यारे महापुरुषों (श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी) का आगमन दिवस भी 17 जून को आ रहा है।

इस दिन भी एक विशेष गुरमति समागम में श्रद्धालुजन श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के चरणों में जुड़कर नाम-वाणी व कीर्तन का लाभ प्राप्त करते हैं। इस पावन अवसर पर भी यानि कि इस गुरमति समागम में भी समस्त श्रद्धालुजन पहुँचने की कृपा करें। ट्रस्ट रतवाड़ा साहिब के वर्तमान मुखी सन्त बाबा लखबीर सिंह जी तथा ट्रस्ट के समस्त सदस्यों के द्वारा आप सबको समागम में पहुँचने के लिए हार्दिक निमन्त्रण दिया जाता है।

आसाड़ु

(आसाड़ु माह की संक्रान्ति - 15 जून, 2019 दिन शनीवार)

सन्त वरियाम सिंह जी
बानी वि. गु. रू. मिशन

राग माझ महला 5 घरु 4

आसाड़ु तपंदा तिसु लगै हरि नाहु न जिन्हां पासि।
जगजीवन पुरखु तिआगि कै माणस संदी आस।
दुयै भाइ विगुचीऐ गलि पईसु जम की फास॥
जेहा बीजै सो लुणै मथै जो लिखिआसु॥
रैणि विहाणी पछुताणी उठि चली गई निरास॥
जिन कौ साधू भेटीऐ सो दरगह होइ खलासु॥
करि किरपा प्रभ आपणी तेरे दरसन होइ पिआस॥
प्रभ तुधु बिनु दूजा को नही नानक की अरदासि॥
आसाड़ु सुहंदा तिसु लगै जिसु मनि हरि चरण निवास॥
अंग - 134

जेठ के महीने, गुरू महाराज जी ने स्पष्ट किया था कि प्रभु के सामने सारा खण्ड, ब्रह्मण्ड, देवियां, देव, दानव, नत मस्तक हो रहे हैं। कोई भी उसका अवज्ञाकारी नहीं है। उसके साथ हमारा मेल होना परम सुखों की दात है। वाहिगुरू जी से बाहर कोई नहीं है, चाहे कई धार्मिक निश्चयों में यह बात आती है कि वाहिगुरू जी से शैतान बागी हो गया और दुनियां को भले कामों से हटाकर, ऐशो-आराम, पापों में प्रवृत्त करा कर, नरक की आग में जलने का अधिकारी बना दिया। वह न तो कोई उपदेश सुनने देता है और न ही कोई जप-तप करने देता है, उसे 'शैतान' कहा जाता है। यह फरिश्ता खुदा के हुक्म के सामने बागी हो गया, इसको भगवान की सभा में से बाहर निकाल दिया गया और इसने कहा, ''हे खुदा! मैं किसी को भी तेरे साथ प्यार नहीं करने दूंगा और न ही किसी को सच के रास्ते पर चलने दूंगा। जो तेरे लोग हिदायतें देने वाले, नसीहतें देने वाले, उपदेश देने वाले होंगे, वह भी मेरे ही बन्दे होंगे, वह मेरी ही बोली बोलेंगे। लोगों को मदिरा, मांस और भोग विलासों में प्रवीण कर दूंगा। वह दूसरों को भी ऐसा ही उपदेश देंगे। बाबा फरीद जी इस फरिश्ते की शक्ति का अनुभव करके फ़रमान करते हैं कि -

फरीदा कूकेदिआ चांगेदिआ मती देदिआ नित।
जो सैतानि वंञाइआ से कित फेरहि चित॥
अंग - 1378

इसी प्रकार भारतीय विचार धारा भी यही मानती है कि अब कलयुग का समय चल रहा है। कर्म धर्म को यह फलीभूत नहीं होने देता। बुद्ध धर्म के आचार्यों का विचार है कि मार (काम देव) मनुष्य को उल्टे रास्ते पर चलाता है, इनको प्रभु से अवज्ञाकारी बनाता है। पर गुरू अमरदास जी फ़रमान करते हैं कि वाहिगुरू जी सबसे बड़े हैं और उसके आगे सारे झुकते हैं।

अब आषाढ़ के महीने के बारे में फ़रमान है कि आषाढ़ में अति की गर्मी हुआ करती है पर जिनके अन्दर वाहिगुरू जी के प्यार की लहरें उठती हैं, उन पर आषाढ़ की गर्मी का कोई प्रभाव नहीं होता। जिस हृदयों को माया रूपी अग्नि जला रही है, उनको यह महीना तपन से भरा हुआ लगता है। पर जो नाम से जुड़े हैं, नाम की ठन्डक के कारण उनका

मन और तन दोनों शीतल हो गये हैं -

उठंदिआ बहंदिआ सवंदिआ सुखु सोइ।
नानक नामि सलाहिऐ मनु तनु सीतलु होइ॥

अंग - 321

पिछले महीने में गुरू पांचवे पातशाह जी लाहौर में बुलाए गये थे और आपको खौलती हुई देगों में उबाला गया, अग्नि के समान लाल हुई तवी पर बिठाया गया, सिर पर आग की तरह गर्म रेत इसलिये डाली गई कि आप सुरत को दशम द्वार में स्थित न कर ले, जहाँ दुख-सुख, भूख प्यास आदि का अहसास न हो। जैसा कि बाणी के अन्दर बताया गया है -

गुरमुखि अंतरि सहजु है
मनु चड़िआ दसवै आकासि।
तिथै ऊंघ न भुख है
हरि अंम्रित नामु सुख वासु।
नानक दुखु सुखु विआपत नही
जिथै आतमराम प्रगासु॥ *अंग - 1414*

पर गुरू महाराज जी ने नाम की शीतलता इतनी बांट दी कि जब मीयां मीर जी यह हालत देखकर ऊंची आवाज़ में कहते हैं, ''महान जुल्म! महान जुल्म! घोर जुल्म! यह हकूमत इस जुल्म के भार के साथ टूट कर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगी।'' उस समय गुरू महाराज जी पीर मीयां मीर को भी मना कर देते हैं, ''पीर जी! देखना कोई वचन मत कर देना, बद-दुआ मत दे देना''। पीर कहने लगे, ''महाराज! आप इतना जुल्म क्यों सहन कर रहे हो? आपकी एक नज़र इस सारे ब्रह्मण्ड को समेट सकती है, फिर आप क्यों नहीं कर रहे?'' महाराज कहने लगे, ''मीयां मीर! किसको श्राप दें? यहाँ तो वाहिगुरू जी के बिना और कोई है ही नहीं।'' कितनी शान्ति तन और मन में है। गुरू महाराज जी ने प्रत्यक्ष दिखा दिया कि आषाढ़ की तपस, नाम से हीन (नाम विमुखों) को तपाती है, जो अपने आपको साढ़े तीन हाथ की, पाँच तत्वों की बनी हुई देह समझते हैं। जिनकी स्थिति आत्म स्वरूप में हो चुकी है, वहाँ पर सदीवी खुशी, आनन्द ही आनन्द है। इतनी ठण्डक है कि सारी दुनियां की तपस को दूर करने की समर्थ रखती है। नाम विमुख, air conditioned (वातानुकूलित) कमरों में बैठा भी, मन की तपस के कारण निराशा में हुआ करता है, उसको सुन्दर सेजों, अनेक सुख, सुगन्धियां, सुख नहीं दे सकतीं। वाहिगुरू जी की पहचान के बिना, जो इस शरीर में अपना आसन लगाकर सब कुछ कर रहे हैं, विष्ठा के कीड़े की तरह हिल जुल करता रहता है। इन भौतिक पदार्थों में अंश मात्र भी सुख नहीं हुआ करता। गुरू महाराज जी फ़रमान करते हैं -

सुंदर सेज अनेक सुख रस भोगण पूरे।
ग्रिह सोइन चंदन सुगंध लाइ मोती हीरे।
मन इछे सुख माणदा किछु नाहि विसूरे।
सो प्रभु चिति न आवई विसटा के कीरे।
बिनु हरि नाम न सांति होइ कितु बिधि मनु धीरे॥

अंग - 707

वाहिगुरू जी को छोड़कर, जो दुनियां के किसी मनुष्य की आशा पर रहते हैं, वह कभी भी सुख और आनन्द नहीं उठा सकते -

जग जीवन पुरखु तिआगि कै माणस संदी आस॥

अंग - 134

क्योंकि जिस मनुष्य से वह आशा करते हैं, वह मनुष्य तो स्वंय ही दुखों से भरा पड़ा है, वह किसी को क्या सुख दे सकता है? गुरू महाराज जी कहते हैं, ''ऐ मनुष्य! यदि तूने आशा करनी है तो केवल एक वाहिगुरू जी से आशा कर, जिसके घर में सब कुछ है, जो तेरे सारे दुखों का इलाज कर सकता है। उसने तेरी त्रुटियों को देखकर तेरे अन्दर पहले ही सुखों का रतन रूपी नाम, शरीर में रख दिया है-

नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु।
देही महि इस का बिस्रामु।
सुंन समाधि अनहत तह नाद।
कहनु न जाई अचरज बिसमाद॥ *अंग - 293*

हरि अउखधु सभ घट है भाई।
गुर पूरे बिनु बिधि न बनाई।
गुरि पूरै संजमु करि दीआ।
नानक तउ फिरि दूख न थीआ॥ *अंग - 259*

यह दवाई समरथ गुरू की बताई हुई युक्ति अनुसार भीतर से प्राप्त हो सकती है। इसलिए तू मनुष्य से आशा छोड़कर वाहिगुरू जी की आशा में रख, जो तेरे घट-घट में व्याप्त है। वह आप ही अपनी मौज मस्ती में क्रिया कर रहा है, एक अगंमी खेल खेल रहा है। उस अगोचर को पहचान और जो तेरे अन्दर 'मैं' भाव है, वह एक प्रतिबिम्ब है, झूठा है, वह अनहुई चीज़ है, जिसको अज्ञान का भ्रम (भुलावा) कहा जाता है। तू अपने आप को वाहिगुरू से अलग समझ कर, जन्म मरण के चक्कर में पड़ा हुआ है और यमों की फांसी

खरबों-खरबों वर्षों की तेरे गले में पड़ चुकी है, पर तू पूर्ण सतगुरू को मिलकर झूठे अधिआस (अस्तित्व) के जाल से बाहर नहीं निकल सका। पहले तो तू अपने आप को साढ़े तीन हाथ की देह मानता है, फिर तू अपने आपको सूक्ष्म शरीर मानने लग जाता है, कारण शरीर मानता है और इससे भी ऊपर यदि सुरत ऊँची हो जाये तो तू अपने आप को जीव कहता रहता है, पर अन्धकार में पड़ा हुआ है। तू नहीं जानता कि तेरा स्वरूप 'आत्मा' है। तुझ में और वाहिगुरू में कोई भी फर्क नहीं है। इस प्रकार से हीन रह कर तूने यमों की फांसी गले में डाल रखी है -

दुयै भाइ विगुचीऐ गलि पईसु जम की फास॥

अंग - 134

यह तेरे ही किये हुये कर्मों का फल है, जो तुझे भोगने पड़ रहे हैं -

जेहा बीजै सो लुणै
मथै जो लिखिआसु॥ *अंग - 134*

किये हुए कर्मों का फल यहाँ ही भुगतना पड़ता है, दरगाह में जाकर भी भोगना पड़ता है। बुरे कर्मों के फल के कारण -

पापी करम कमावदे करदे हाए हाइ।
नानक जिउ मथनि माधाणीआ तिउ मथे धरमराइ॥

अंग - 1425

कर्म हमेशा हउमै को भोगने पड़ते हैं। हउमै एक ज़ज़बा है, जिसके अधीन होकर चेतन सुरत अपने आपको वाहिगुरू जी से अलग समझती है। सत्संग, महापुरुषों की संगत से हीन रह कर, पुरुष माया की कशमकश में उलझ जाता है और मेरी ही मेरी करके फज़ूल जन्म गवां देता है। यह उम्र रूपी रात बीत जाती है, पश्चाताप ही पल्ले पड़ता है; आया तो परमेश्वर को मिलने के लिये था। वाहिगुरू जी इसके अन्दर आसन लगाये इसका इन्तज़ार कर रहे हैं। सन्त महापुरुष ऊँची-ऊँची आवाज़ें देकर इसको सावधान करते हैं; याद दिलाते हैं कि तू माता के उदर में श्वांस-श्वांस नाम धुन में मस्त था, उस नाम धुन के कारण तेरे अन्दर प्रकाश था। एक समाधि की अवस्था में लीन हुआ, गर्भ अग्नि से बचकर संसार में आया। पर फिर माया के प्रभाव में आकर उस प्रभु को भूलकर, फिर उन कामों में व्यस्त हो गया, जिसके कारण अनेक बार जन्म मरण के दुख झेल चुका है-

या जुग महि एकहि कउ आइआ।
जनमत मोहिओ मोहनी माइआ।
गरभ कुंट महि उरध तप करते।
सासि सासि सिमरत प्रभु रहते।
उरझि परे जो छोड़ि छडाना।
देवनहारु मनहि बिसराना॥ *अंग - 251*

ये बातें तेरे ध्यान में ही न रही और न ही सत्पुरुषों की सच की आवाज़ को माना, बल्कि इसके विपरीत सत्पुरुषों की निन्दा करता रहा। फल क्या हुआ? समय बीत गया, यम फिर फन्दा लेकर आ गये, गले में डाल दिया फिर पछताया-

रैणि विहाणी पछुताणी उठि चली गई निरास।
जिन कौ साधू भेटीऐ सो दरगह होइ खलासु॥

अंग - 134

आपीन्है भोग भोगि कै
होइ भसमड़ि भउरु सिधाइआ।
वडा होआ दुनीदारु
गलि संगलु घति चलाइआ।
अगै करणी कीरति वाचीऐ
बहि लेखा करि समझाइआ।
थाउ न होवी पउदीई हुणि
सुणीऐ किआ रूआइआ।
मनि अंधै जनमु गवाइआ॥ *अंग - 464*

जो कुछ संसार में पाप कमा कर, माया इकट्ठी की थी, वह मरते समय साथ न गई। माया का मोह परलोक में भी इसे जलाता है। पर एक आध को सूझ आ गई, उसने सतपुरुषों, साधुओं, सन्तों, आरिफों, पीरों, फकीरों के अधिकार (rights) की आवाज़ सुनी और समरथ गुरू से शब्द प्राप्त करके परिश्रम किया; वह जब इस संसार से जाता है तो धन्य-धन्य होता है, जय-जयकार होती है। उनको यमदूत, अरे! नहीं कहते, बल्कि यम आदर करते हैं, सेवा करते हैं-

जिन कौ साधू भेटीऐ सो दरगह होइ खलासु॥

अंग - 134

साधुओं की संगत करके क्या मिला और क्या परिश्रम किया -

जिसु वखर कउ लैनि तू आइआ।

(शेष पृष्ठ 33 पर)

श्री गुरू अरजन देव जी, योगिराज को उपदेश

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक मई, पृष्ठ - 17)

समर्थ गुरू के बिना जो अन्धकार मन के अन्दर पड़ गया है, एक से अनेक बनकर, हंगता और ममता के अन्दर फँसा हुआ, यह जीव बन गया है। महाराज जी कहते हैं कि भद्रपुरुष! तुमने तो अपने सारी सुरति गंवा ली है, तुम तो स्वयं को बिल्कुल ही भूल गए हो। तुम कहते हो कि मैं बहुत पढ़ा लिखा हूँ, मैं बहुत कुछ जानता हूँ, मैंने दुनिया भर की पुस्तकें पढ़ ली हैं लेकिन वास्तविकता यह है कि तुम तो सब कुछ ही भूल गए हो। तुम्हारे अन्दर तो एक अलग प्रकार की सुरति ही बन गई है। तुम्हारे अन्दर तो वह सुरति पैदा हो गई है, जिसकी वजह से तुम आवागमन के चक्रव्यूह में बुरी तरह से फँस चुके हो। उसी सुरति के कारण तुम दुखी और सुखी होते हो, स्वयं को गरीब या अमीर अनुभव करते हो। यह सब कुछ तुम्हारी 'मैं' की सुरति ही है। जो सयाना व्यक्ति होता है, वह सबसे पहले अपने आप की खोज करता है कि मैं कौन हूँ? जो हमारा यह पाँच तत्वों का पुतला बना हुआ है, इसमें 'मैं' कौन सा तत्व है? पानी तो मैं हूँ नहीं, आग मैं नहीं हूँ, मिट्टी मैं नहीं हूँ, हवा भी मैं नहीं हूँ और आकाश भी मैं नहीं हूँ -

भोलिआ हउमै सुरति विसारि ॥ ***अंग - 1168***

यह जो तुम्हारे अन्दर 'मैं' की सुरति आ गई है, इसके कारण तुम इतने ज्यादा निचले स्तर पर चले गए हो कि तुमने स्वयं को एक शरीर समझना शुरू कर दिया है। फिर किसी की कही हुई बात को तुम मानते नहीं हो। गुरू जी जोर लगाकर बैठ जाते हैं कि तुम शरीर नहीं हो, तुम तो आत्म स्वरूप हो, न तुम कभी जन्म लेते हो, न कभी मरते हो, न तुम कभी दुखी होते हो और न कभी सुखी होते हो, तुम तो परमानन्द हो। तुम्हारा मान या अभिमान कुछ भी नहीं है, तुम तो एक रस हो। तुमने हउमै के प्रभाव के अन्दर आकर स्वयं को इतना नीचे क्यों गिरा लिया है कि तुम स्वयं को साढ़े तीन हाथ की देह ही मानने लग पड़े हो। इस हउमै की सुरति को भूल जाओ क्योंकि यह तुम्हारा बहुत नुक्सान कर रही है-

धारना - जंमदा ते मरदा है हउमै दा बंनिआ होइआ।

हउमै एहा जाति है हउमै करम कमाहि ॥
हउमै एई बंधना फिरि फिरि जोनी पाहि ॥
अंग - 466

तुम्हारे जन्म लेने और मरने का कारण यह हउमै ही है और यह मिथ्या वस्तु है, सत्य नहीं है। तुम इसे सत्य जानकर फँस गए हो -

पारब्रहम के सगले ठाउ ॥
जितु जितु घरि राखै तैसा तिन नाउ ॥
आपे करन करावन जोगु ॥
प्रभ भावै सोई फुनि होगु ॥
पसरिओ आपि होइ अनत तरंग ॥ ***अंग - 275***

महाराज जी कहते हैं कि वह स्वयं ही अनेकों रूपों और तरंगों में होकर फैल गया है। जिस प्रकार से एक बरगद का बीज बहुत छोटा सा होता है लेकिन जब वह फैलता है तो एकड़ों में फैल जाता है। यदि उसकी जड़ों को दबाते जाओ, दबाते जाओ तो वह बहुत जमीन घेर लेता है। वास्तव में वह बहुत छोटा सा बीज है जो कि इतनी जगह में फैल गया है। इसी प्रकार से परमात्मा स्वयं ही फैल कर अपने रूप में खेलता है, यहाँ पर दूसरा तो कोई है ही नहीं। बस दूसरा जो है वह हउमै के प्रभाव के नीचे यह जीव है जो कि अपना पृथक अस्तित्व स्थापित करके दुखों से घिर जाता है और जन्म लेता रहता है, मरता रहता है -

पसरिओ आपि होइ अनत तरंग ॥
लखे न जाहि पारब्रहम के रंग ॥
जैसी मति देइ तैसा परगास ॥
पारब्रहमु करता अबिनास ॥
सदा सदा सदा दइआल ॥
सिमरि सिमरि नानक भए निहाल ॥ ***अंग - 275***

गुरू जी कहते हैं कि यह एक भ्रम है, यह तो उसने अपना एक खेल बनाया हुआ है -

अपनी माइआ आपि पसारी आपहि देखनहारा ॥
नाना रुपु धरे बहु रंगी सभ ते रहै निआरा ॥
अंग - 537

अब इससे क्या फर्क पड़ जाएगा, यदि हम स्वयं को

साढ़े तीन हाथ की देह मानना छोड़ दें? गुरू जी फुरमान करते हैं कि -

मै नाही प्रभ सभु किछु तेरा ॥
ईघै निरगुन उघै सरगुन
केल करत बिचि सुआमी मेरा ॥ ***अंग - 827***

स्वयं ही अपने नाना रूपों को धारण करके -

एक मूरति अनेक दरसन कीन रुप अनेक॥
खेल खेल अखेल खेलन अंत को फिर एक॥

जापु साहिब

एक बार एक राजा बैठा हुआ है, वजीर-अमीर सारे बैठे हुए हैं। इतने में वहाँ पर एक जादूगर आ जाता है। उसने आकर कहा, महाराज जी की जय हो। राजा ने कहा, कैसे आए हो? वह बोला, महाराज जी! मैं जादूगर हूँ और मैं बहुत प्रकार के खेलों का जानता हूँ। राजा ने कहा, देखो जादूगर! हमने खेल तो बहुत देखे हैं, क्या तुम्हारे पास कोई ऐसा खेल है, जिसमें कि मनोरंजन भी हो और कोई गहरा उपदेश भी हो? वह बोला, हाँ महाराज जी! मैं ऐसा खेल ही दिखाऊँगा। मेरे खेल के अन्दर मनोरंजन भी होगा, राग द्वैष भी होगा, साथ ही उपदेश भी होगा। राजा ने कहा, ठीक है, फिर दिखलाओ?

जादूगर बोला, महाराज जी! मैं अपना खेल दिखाना चाहता हूँ लेकिन मेरी स्त्री मेरे साथ है। मैंने देवताओं के साथ युद्ध करना है। युद्ध के अन्दर यह भी हो सकता है कि मैं जीत कर वापिस भी लौट आऊँ और यह भी हो सकता है कि मैं युद्ध के अन्दर शहीद ही हो जाऊँ। आप जानते ही हो कि जब युद्ध होता है तो एक ने मारना है और दूसरे ने मरना है। मेरी जो औरत है, यह बहुत खूबसूरत है। यदि आप इसकी सुरक्षा की जिम्मेदारी ले लो तो फिर मैं आपको खेल दिखाना शुरू करूँ?

राजा बोला, जादूगर! यह तो हमारी लड़की के समान है, इसे तुम यूँ समझो कि यह मेरी बेटी ही है। इसे मैं अपनी बेटी के पास भेज देता हूँ, वहाँ पर यह आराम से रहेगी, अतः इसके बारे में तुम तनिक सी भी चिन्ता मत करो।

वह कहने लगा, ठीक है, मैं अब युद्ध करने के लिए जा रहा हूँ। वह देखते ही देखते अलोप हो गया। बहुत जोर से आवाज आई कि मैं, अब देव लोक में पहुँच गया हूँ और मेरा युद्ध अब सबसे पहले वरुण देवता के साथ होने जा रहा है, मेरा युद्ध अब हवा के देवते के साथ हो रहा है, अब अग्नि देवता के साथ हो रहा है। इसके बाद कहने लगा, महाराज! मैंने अब वरुण देवता को मार डाला है और अब मैं उसे नीचे फेंक रहा हूँ। अब आप उसके दर्शन कर सकते हैं। सभी लोग देख रहे हैं कि वरुण देवता का सिर आसमान में से आ रहा है और उसके आने से चारों तरफ पानी ही पानी फैल गया है। सबके मन में बड़ी खुशी हुई। राजा के मन में ख्याल आया कि यह जो जादूगर है क्यों न मैं इसे अपनी सेना का जरनैल ही बना दूँ? यह इतना योद्धा है कि इसके अन्दर देवताओं को भी मारने की शक्ति है। वह देवताओं को मार-मार कर नीचे फेंकता जा रहा है। आखिर में हाय! हाय! की आवाज आती है और जादूगर कहता है कि मेरी बाँह कट गई है, मेरी लात कट गई है, मेरी दूसरी लात भी कट गई है और अब मैं मारा जाने वाला हूँ, आखिर उसकी टाँगें और बाँहें नीचे गिर पड़ी और उसका धड़ तथा सिर भी नीचे गिर पड़ा। चारों तरफ शोक की लहर दौड़ गई। सबके नेत्रों में से आँसू निकल रहे हैं कि देखो! कितना शूरवीर था, उसने खेल दिखाते-दिखाते अपने आप को ही समाप्त कर लिया। उस समय उसकी पत्नी भी जोर-जोर से रोने लग पड़ी। वह कहने लगी, महाराज जी! मैंने तो अपने पतिदेव के साथ ही सती होना है। पति के बिना मेरी जिन्दगी का अब क्या अर्थ रह जाता है?

आखिर चिता बनाई गई और वह उसके ऊपर बैठ कर सती हो गई। सारा कुछ हो गया। सभी गम की स्थिति में बैठे हुए हैं और इतने में वह जादूगर आ गया और बोला, महाराज जी की जय हो।

सभी हैरान हो गए कि यह तो वही जादूगर है। सभी बोले, जादूगर! तुम तो मर गए थे?

वह बोला, यदि मैं मर गया होता तो तुम लोगों के सामने कैसे आ जाता? वह बोला, मेरी पत्नी लाओ।

वे कहने लगे, जादूगर! जो तुम्हारा शरीर टुकड़े-टुकड़े होकर नीचे गिरा था, तुम्हारी स्त्री तो उस शरीर के साथ ही सती हो गई। जादूगर बोला, जब मेरा शरीर नीचे गिरा ही नहीं तो वह सती किसके साथ हो गई?

सभी लोग आश्चर्य में पड़ गए और किसी को कोई भी बात समझ में नहीं आ रही है। जादूगर कहने लगा देखो! आपकी नीयत खराब हो गई है और आपने मेरी पत्नी को अपनी कैद में बन्द करके रख लिया है। वह तो सात तालों के अन्दर कैद की हुई है। जब जादूगर ने आवाज दी तो उधर से आवाज आई कि मुझे तो राजा ने सात तालों के अन्दर कैद किया हुआ है। राजा की हैरानी और अधिक बढ़ गई। जब राजा ने ताले खोलकर देखा तो उसकी पत्नी वहाँ पर मौजूद थी।

उस समय जादूगर ने कहा महाराज! आपकी जय हो। मेरा खेल आपको कैसे लगा?

राजा कहने लगा, जादूगर! तुमने तो बहुत सारे रस हमारे अन्दर भर दिए, कभी हमें खुशी हुई, कभी गमी हुई, कभी हमें हैरानी हुई, इस प्रकार हमने बहुत सारे रंग इस खेल के द्वारा देखे हैं। जादूगर बोला, महाराज! न तो मैं कहीं गया हूँ, और न ही कहीं से आया हूँ। न मेरी कोई स्त्री है और न ही मैंने किसी देवता के साथ युद्ध किया है। मैं तो अपनी माया का करिश्मा आपको दिखला रहा था। मेरे अन्दर जो एक शक्ति सिद्ध की हुई है, उसके द्वारा मैंने सबको हिप्नोटाइज्ड करके देवताओं को मरते हुए तथा चिताओं को जलता हुआ दिखाया था। यहाँ पर तो कुछ हुआ ही नहीं। कहाँ है वह चिता जिसके अन्दर मेरी पत्नी का जल जाना आप बलता रहे थे?

सभी लोग हैरान हो रहे हैं। राजा कहने लगा, जादूगर! इस खेल के द्वारा हमें शिक्षा क्या मिलती है?

वह जादूगर बोला, देखो! मैं एक छोटा सा जादूगर हूँ। मैंने अपनी माया के द्वारा आप सबको कितना आश्चर्यचकित कर दिया है और मैं केवल एक ही हूँ। मैंने कोई अधिक रूप भी धारण नहीं किए हैं। न मेरी कोई पत्नी है, न मैंने कोई लड़ाइयाँ लड़ी हैं क्योंकि मैं तो यहीं पर एक जगह ही खड़ा हुआ हूँ। मैंने तो केवल एक ख्याल मात्र ही किया है, जिसकी बदौलत मैंने कितना विस्तार बना कर रख दिया। अब इसी प्रकार से वह जो पारब्रह्म परमेश्वर है, उसका ख्याल कितना जबरदस्त होगा कि वह स्वयं एक से अनेक होकर अपना खेल कर रहा है।

धारना - आपे इक तों अनेक रुप धार के,
आपे खेले खेल आपणी।

एक से अनेक होकर परमात्मा ने एक खेल की रचना की है। जिस प्रकार से सूरज तो एक है और बहुत सारे बर्तन पानी से भरे पड़े हैं। प्रत्येक के अन्दर अलग-अलग सूर्य दिखाई पड़ेगा। जो बर्तन टिका हुआ है, वहाँ पर सूर्य शान्त है। जो बर्तन हिलता है, वहाँ पर सूर्य हिलता हुआ दिखाई देता है, ठीक इसी प्रकार से प्रतिबिम्ब और बिम्ब का सम्बन्ध है -

जिउ प्रतिबिंबु बिंब कउ मिली है उदक कुंभु बिगराना॥
कहु कबीर ऐसा गुण भ्रमु भागा तउ मनु सुंनि समानाँ॥ ***अंग - 475***

उसी प्रकार से एक ही परमात्मा अनेकों शरीरों के अन्दर दुखी व सुखी होता हुआ प्रतीत हो रहा है लेकिन वास्तव में कुछ भी नहीं है। गुरू जी कहते हैं कि यह जो दृश्य है, यह ब्रह्म से पृथक नहीं है बल्कि यह सब तो ब्रह्म का ही एक खेल हो रहा है लेकिन वह अलग अलग प्रतीत हो रहा है। कहने लगे, देखो! एक रस्सी, अन्धेरे में पड़ी हुई है, एक भ्रम पड़ जाता है कि साँप पड़ा हुआ है, फिर व्यक्ति भयभीत होने लगता है कि कहीं यह साँप मुझे काट ही न ले। इसके अन्दर हम प्रयत्न करते हैं कि कहीं यह साँप अन्दर ही न आ जाए, इसलिए इसे हमें मार डालना चाहिए। लेकिन जब दिन का उदय हो गया तो वह रस्सी में साँप का भ्रम दूर हो गया क्योंकि साँप तो वहाँ पर था ही नहीं। इसी प्रकार से परमात्मा के बारे में अज्ञानता के कारण यह सारा प्रपंच, जो कि वास्तव में परमात्मा से जुदा नहीं है, हमें दिखाई देता है। अज्ञानता के कारण ही एक से अनेक दिखाई पड़ता है। हमें शंकाएँ पड़ जाती हैं, जिनके कारण हमें करोड़ों जन्मों के भ्रम पड़ जाते हैं। हम लोग इस बात को समझ ही नहीं पाते हैं ओर न समझ पाने के कारण हम स्वयं को पृथक गिनने लगते हैं। हम स्वयं को शरीर गिनने लगते हैं, जीवात्मा समझने लगते हैं और हम बार-बार जन्म लेते हैं और बार-बार मरते हैं। जब हमें पूरे सतगुरू से ज्ञान हो जाता है तो जिस प्रकार से प्रकाश होने से रस्सी का भ्रम दूर हो जाता है, उसी प्रकार से जब हमारे अन्दर ज्ञान हो जाता है तो उस समय संसार का भ्रम दूर होकर चहुँओर एक ही दिखाई पड़ने लगता है और फिर दूसरा कोई दिखाई ही नहीं पड़ता है -

धारना - दूजा ना वेखदे, प्रभ जी बिन ब्रहमगिआनी।
मनि साचा मुखि साचा सोइ ॥
अवरु न पेखै एकसु बिनु कोइ ॥
नानक इह लछण ब्रहम गिआनी होइ ॥ अंग - 272

श्री आनन्दपुर साहिब का युद्ध लगा हुआ है, बहुत भारी युद्ध है, सभी योद्धागण मोर्चों पर बैठे हुए हैं, रुक-रुककर गोलियाँ चलने की आवाजें आती हैं। उस समय एक प्रेमीपुरुष, जो कि दशमेश जी का सिक्ख है और जिसका नाम कन्हैया है, जरूरतमन्द व घायल योद्धाओं को पानी पिलाता हुआ घूम रहा है। जहाँ से भी आवाज आती है, वह सबको पानी पिलाता है जो भी घायल होकर जमीन पर गिरता है वह दौड़कर उसे पानी पिलाता है।

शाम हो गई। गुरू महाराज जी ने पूछा, प्रेमीजनो! आज के युद्ध के हाल सुनाओ। सभी लोग एक स्वर में बोले, महाराज जी! आज हमारी एक शिकायत है। शिकायत यह है कि यह जो कन्हैया है जो खालसा की फौज के बीच घूमता रहता है, यह कोई जासूस प्रतीत हो रहा है।

महाराज जी बोले, वह कैसे?

सारे कहने लगे, महाराज जी! गोलियाँ चलती हैं, तीर चलते हैं लेकिन हैरानी की बात है कि इसे कोई भी नहीं मारता है। सभी बचाकर तीर मारते हैं यह पानी की मशक

उठाकर घूमता रहता है और सबको पानी पिलाता रहता है। यह हम लोगों को भी पानी पिलाता रहता है और मुगल सेनाओं को भी पानी पिलाता रहता है। यदि यह सिक्ख हो तो वे लोग इसे मार क्यों न डालें?

दशमेश जी बोले कि भाई कन्हैया जी को बुलाओ? अन्धेरा हो चुका है, सभी योद्धागण मशालें और पालकियाँ लेकर अपने-अपने फोजियों को ढूँढ़ रहे हैं, जख्मियों को सम्भाल रहे हैं। आगे जाकर जब उन्होंने भाई कन्हैया जी के बारे में पूछा ता उन्हें पता चला कि वे तो अभी मैदान-ए-जंग से वापिस लौटे ही नहीं हैं। सिक्ख वहीं पर पहुँच जाते हैं। अन्धकार हो चुका है, कहीं पर कुछ भी पता नहीं लग पा रहा है, लेकिन एक ऐसी आवाज आ रही है -

धारना - तूंहीं-तूंहीं मोहिना।
गुरहि दिखाइओ लोइना ॥ 1 ॥ रहाउ ॥

ईतहि उतहि घटि घटि घटि घटि
तूंही तूंही मोहिना ॥ ***अंग - 407***

अन्धेरे में उसकी आवाज सुनी और आवाज की सीध में चलते जाते हैं और उसके पास पहुँच जाते हैं। वहाँ पर वे क्या देखते हैं कि यह तो किसी जख्मी को पानी पिला रहा है। उस जख्मी के दाँत जुड़ गए हैं, वह उन्हें खोलकर मुँह में पानी डाल रहा है, वे कुछ कदम पीछे ही रुककर बातचीत को सुनने लग पड़े।

जख्मी बोला, तुम कौन हो?

भाई कन्हैया जी बोले, मैं गुरू गोबिन्द सिंह जी का एक नगण्य सा सिक्ख हूँ।

जख्मी - ऐ सिक्ख! तुम्हारा नाम?

भाई कन्हैया - जी! मुझे भाई कन्हैया कहते हैं।

वह जख्मी बोला, तुम्हें पता है कि जिसे तुम पानी पिला रहे हो और जिसे पुनः होश में ला रहे हो, वह कौन है?

भाई कन्हैया जी बोले, मुझे तो यह पता है कि यहाँ पर परमात्मा के बिना और कुछ भी नहीं है अतः तुम परमात्मा का ही एक रूप हो।

वह बोला, भाई कन्हैया! तुम्हारी इस प्रकार की दृष्टि पर मैं बलिहार जाता हूँ। मैं वही जरनैल हूँ जिसने आज बीड़ा उठाया था कि आज मैंने गुरू गोबिंद सिंह को या तो जीवित पकड़ लाना है या फिर उन्हें शहीद कर देना है। क्या तुम लोगों के मन में वैर नहीं होता है?

भाई कन्हैया जी बोले, नहीं जरनैल साहिब! हम लोगों के अन्दर वैरभाव नहीं होता है क्योंकि वैर करना तो हमारे गुरू ने हमें सिखाया ही नहीं है -

बिसरि गई सभ ताति पराई ॥
जब ते साधसंगति मोहि पाई ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
ना को बैरी नही बिगाना
सगल संगि हम कउ बनि आई ॥ ***अंग - 1299***

धारना - ना दिसे बेगाना जी,
ना कोई वैरी, ना कोई वैरी।

भाई कन्हैया जी बोले हम लोगों के लिए तो सब परमात्मा ही है।

उसने कहा, तुम्हें इस प्रकार बुद्धि किसने प्रदान की है?

बाई कन्हैया जी बोले, जी, गुरू कलगीधर जी ने।

वह बोला, इसका तात्पर्य तो यह है वे एक फरिश्ते हैं जबकि हम लोग उन्हें दुश्मन समझ रहे हैं।

कहने लगे गुरू दशमेश जी तो सबके घट-घट में बसने वाले हैं, वह तो एक खेल हो रहा है, आप लोग जिस भावना से आते हो तो आपकी भावना को वे पूरी कर देते हैं। उनका किसी के साथ कोई वैर भाव नहीं है। वे तो ब्रह्म दृष्टि रखते हैं और सबके अन्दर एक ही परमात्मा को देखते हैं। वे तो जन साधारण के नेत्रों को खोलने के लिए आए हैं, द्वैत भाव को समाप्त करने के लिए आए हैं। इस प्रकार से उनके पारस्परिक वचन हो रहे हैं। भाई कन्हैया ने पानी क्या पिलाया कि उसकी अज्ञानता को ही समाप्त कर दिया जो बात उनके हृदय में थी -

ब्रहम गिआनी की द्रिसटि अंम्रितु बरसी ॥
अंग - 273

उन्होंने काया कल्प कर दिया, वैर भाव में से निकालकर मित्र ही बना दिया।

भाई कन्हैया जी को गुरू जी के पास ले आए। सारे सिक्ख कहने लगे, महाराज जी! यह मुगल सेनाओं के जरनैल को पानी पिला रहा था।

महाराज जी कहने लगे, भाई कन्हैया! तुम मुगल फौजों को पानी पिला रहे थे?

वह बोला, नहीं, महाराज जी।

महाराज जी - फिर क्या तुम पहाड़ी सेनाओं को पानी पिला रहे थे?

वह बोला, नहीं, महाराज जी।

महाराज जी - फिर क्या तुम खालसा फौजों को पानी

पिला रहे थे?

वह बोला, नहीं, महाराज जी।

फिर तुम किसे पानी पिला रहे थे?

वह कहने लगा, महाराज जी! मैं तो तुम्हारे प्रेम में ओत-प्रोत होकर आपको ही पानी पिला रहा था। आपके बिना दूसरा यहाँ पर कोई है ही नहीं। मुझे तो आपके बिना अन्य कोई दिखाई देता ही नहीं है। यदि मुझे कोई दिखाई देता है, तो केवल गुरू गोबिन्द सिंह ही दिखाई पड़ता है क्योंकि मेरे नेत्रों के अन्दर जो विकार था, वह समाप्त हो चुका है।

धारना - गुराँ ने मेरे ओ नैण खोल 'ते,
मैनूं सारीआँ घटाँ दे विच दिसिआ।

पातशाह! मैं क्या करूँ? मैं तो बेवश हूँ। मुझे कोई दुश्मन दिखाई ही नहीं पड़ता है। मुझे तो केवल आप ही दिखाई पड़ते हो। मैं तो आपके प्यार में सराबोर होकर आपको ही सुबह से शाम तक पानी पिलाता रहता हूँ। अब मैं तो रहा ही नहीं हूँ, अब तो केवल आप ही हो।

अतः यह जो दृष्टि है, यह माया से ऊपर की दृष्टि है और ब्रह्म की पहचान से बाद ही यह दृष्टि प्राप्त हो पाया करती है।

गुरू महाराज जी बहुत प्रसन्न हुए और कहने लगे, कन्हैया! तुम्हें तत्व ज्ञान की प्राप्ति हो गई है। तुम्हें इस बात की समझ आ गई है कि -

धारना - तूत निरंजन जोत सबाई, सोहं भेद न कोई।

गुरू जी कहने लगे, प्रेमीजनो! इसे परम अवस्था प्राप्त हो गई है, नेत्र खुल गए हैं और इसके भ्रम का पर्दा दूर हो गया है और अब यह कण-कण में एक ही परमात्मा को देखता है -

ततु निरंजनु जोति सबाई सोहं भेदु न कोई जीउ ॥
अपरंपर पारब्रहमु परमेसरु
नानक गुरु मिलिआ सोई जीउ ॥ अंग - 599

वह कहने लगा, महाराज जी! मुझे तो अब कोई दूसरा दिखाई ही नहीं पड़ता है, मैं अब क्या करूँ? मैं तो तुम्हारे प्यार में दीवाना होकर तुम्हें ही पानी पिलाता हूँ।

महाराज जी कहने लगे, भाई कन्हैया! अब तुम मुझे केवल पानी ही मत पिलाना बल्कि मेरे जख्मों पर मरहम भी लगाना। और उनके ऊपर पट्टियां भी बाँधना। वास्तविकता यही है कि यहाँ पर दूसरा कोई है ही नहीं बल्कि सब ब्रह्म का ही पसारा है, जिस प्रकार से सपना तो कुछ भी नहीं होता है जबकि विस्तार कितना अधिक होता है। सपने मे पहाड़ दिखाई देते हैं, दरिया दिखाई देते हैं, घर-बार व जंगल दिखाई देते हैं, दुश्मन दिखाई देते हैं, शेर नजर आते हैं, फौजें दौड़ी जाती दिखाई पड़ती हैं, लेकिन जब मनुष्य जाग जाता है तो फिर क्या होता है? वह सपना लय हो जाता है, फिर बाकी कुछ भी नहीं रहता है। इसी प्रकार से जो यह सारा प्रपंच नजर आता है, यह कुछ भी नहीं है। यहाँ तो परमात्मा अपनी मौज में खेल कर रहा है लेकिन भ्रम इतना पक्का हो गया है कि व्यक्ति को इस बात पर यकीन ही नहीं आता है। गुरू महाराज जी इसे समझाते जाते हैं लेकिन इसे कुछ समझ में नहीं आता है, अतः जिसके अन्दर ज्ञान का प्रकाश हो जाए, पाँचों क्लेशों का नाश हो जाए तो उसे कण-कण में परमात्मा दिखाई देने लग पड़ता है।

अतः महाराज जी कहने लगे, योगिराजह्य यहाँ पर परमात्मा ने अपना ही विस्तार कर रखा है। दूसरा तो यहाँ पर कोई है ही नहीं -

बाजीगरि जैसे बाजी पाई ॥
नाना रुप भेख दिखलाई ॥ अंग - 736

जिस प्रकार से मैंने पहले विनती की थी कि बाजीगर ने अपने खेल के दौरान कितना विस्तार करके दिखला दिया लेकिन जब उसने विस्तार को रोका -

साँगु उतारि थंमि्ओ पासारा ॥
तब एको एकंकारा ॥ 1 ॥ अंग - 736

वहीं एकंकार पहले था, 'आदि सचु' जब यह पसारा हुआ 'जुगादि सचु' जो अब चल रहा है 'है भी सचु' और जब कुछ भी नहीं होगा, 'नानक होसी भी सचु' वह सत्य स्वयं ही है और अपने रंग में, अपनी मौज में खेल करता दिखाई देता है। उसने खेल ही ऐसा कर दिया है। यदि विस्तारपूर्वक बात को समझा जाए तो समय अधिक लगता है और यदि वचन मानना हो तो गुरू के वचन को मान ले कि वह स्वयं ही अपनी मौज में अपना खेल कर रहा है। अतः इस प्रकार योगिराज सारी बात को सुनकर पूर्ण सन्तुष्ट हो गया और उसके सारे भ्रमों का नाश हो गया, फलस्वरूप उसे एक ही परमात्मा सारे संसार में दिखाई पड़ने लग पड़ा लेकिन अभी उसे अवस्था प्राप्त नहीं हुई क्योंकि वह अवस्था तभी प्राप्त हो पाती है जिस समय गुरू की कृपा हो जाए। इस बात को हम समझ ही नहीं पाते हैं क्योंकि हमें इन बातों के बारे में पता ही नहीं है। यही कारण है कि हमारी मंजिल अधूरी ही रह गई है। साधु संगत जी! इसीलिए हम नीचे ही नीचे रह गए हैं।

एक प्रेमीपुरुष की मुझे चिट्ठी आई वह कहने लगा, जी मैं क्या करूँ, मैंने बहुत सारी पुस्तकें पढ़ी हैं, मैंने रजनीश को पढ़ा है, विवकानन्द को पढ़ा है और भी बहुत महान

विभूतियों को पढ़ा है तथा बहुत सारे सन्तजनों के कीर्तन भी सुने हैं। वह कहने लगा कि सब यहीं पर रुक जाते हैं कि अमृतपान करो और गुरू वाले बनो। वे इससे आगे की कोई बात ही नहीं करते हैं, अब मेरे जैसा व्यक्ति क्या करे? हम कहाँ जाएँ? क्योंकि हमें इससे आगे कोई रास्ता ही नहीं मिलता है। मैंने आपके दीवान सुने हैं, जिनमें मुझे कुछ उम्मीद हुई है कि शायद मुझे यहाँ से कोई सही मार्ग मिल सके लेकिन आपके चहुँओर लोगों का इकट्ठ इतना अधिक है कि आपको मिल पाना ही अत्यन्त कठिन कार्य है।

मैंने कहा, भद्रपुरुष! मैं तो सारा दिन खाली ही रहता हूँ तथा आम लोगों को मिलने का समय भी रखा हुआ है और उस समय थोड़े से लोग ही आते हैं, वैसे आमतौर पर मेरा स्वभाव एकान्त पसन्द ही है यानि कि मैं प्रायः चुप रहना ही पसन्द करता हूँ।

अतः सही मार्ग ही नहीं मिल पाता है और फिर वचनों की कमाई नहीं हो पाती है। यदि वचनों के बारे में पता भी लग जाए लेकिन जब तक व्यक्ति अभ्यास नहीं करता है, तब तक वे वचन अन्दर ठहर ही नहीं पाते हैं। दरअस्ल इस जीव का करोड़ों जन्मों से स्वयं को जीव मानने का अध्यास पक गया है और फिर यदि हम स्वयं को जीव भी मान लें तब भी गनीमत है क्योंकि हम तो स्वयं को शरीर ही मानकर बैठे हुए हैं।

जब मैंने महाराज जी के दर्शन किए तो उस समय उनके शरीर की साढ़े सोलह साल की उम्र थी। उन्होंने सवाल किया, तुम कौन हो? पहली बार महापुरुषों के पास गया था। वैसे मैं जाता तो बहुत सारे सन्तजनों के पास था लेकिन इस प्रकार का सीधा सवाल आजतक किसी ने नहीं किया था। स्कूलों में तो इन चीजों का पता ही नहीं था और पंजाबी की पढ़ाई उन दिनों स्कूलों में होती ही नहीं थी। बस कबूतरों की कहानियाँ वगैरह सुनाकर काम खत्म कर देते थे और कोई ढंग की बात तो बताते ही नहीं थे। बिल्लियों व कुत्तों आदि की कहानियाँ ही पढ़ाते रहते थे।

महाराज जी ने जब सवाल किया कि तुम कौन हो, तो उस समय सारी संगत हँसती रही कि बताओ इस बच्चे को इस साधारण से सवाल का जवाब भी देना नहीं आता है। मैंने महाराज जी को कहा कि महाराज जी, मुझे बताना नहीं आ रहा है। वे बोले, तुम्हें किस प्रकार से बताना नहीं आ रहा है? जब मैंने खोलकर बताया तो महाराज जी कहने लगे, चुप करके बैठ जाओ। 45 मिनटों तक महाराज जी ने अपने नेत्र ही नहीं खोले और 45 मिनट के बाद वे मुझसे कहने लगे, नेत्र खोलो! देखो! यह तो कोई भी नहीं बता सकता है कि मैं कौन हूँ, लेकिन काम चलाने के लिए इसे जीवात्मा कहते हैं जो कि तुमने भी कहा है। अच्छा है कि तुमने स्वयं को शरीर नहीं कहा है या माता-पिता द्वारा रखा हुआ नाम, वरियाम सिंह नहीं कहा है। यह भी अच्छा है कि तुमने यह नहीं कहा कि मैं हिन्दू हूँ, सिक्ख हूँ या मुसलमान हूँ। यह भी नहीं कहा कि मैं अमुक जगह का रहने वाला हूँ। तुमने तत्व की बात कही है कि मुझे बताना नहीं आ रहा है। तुमने कहा कि जब संसार की रचना हुई थी, जो वजूद मेरा पहले दिन कायम हुआ, मैं वह हूँ। मुझे तो कुछ पता ही नहीं था, बस जो बात मेरे ख्याल में आई, वह मैंने कह डाली।

महाराज जी मुझे कहने लगे कि एक कदम आगे और बढ़ा लो। दो अक्षर हैं - जीव+आत्मा। जीव जो है यह मिथ्या है। यह हमारा वचन मान लो कि वास्तव में यह नहीं है, बस एक भ्रम पड़ा हुआ है। अब बाकी क्या रह गया? मैंने कहा, महाराज जी! बाकी रह गया - आत्मा। कहने लगे, इसी को पक्का करने में सारी जिन्दगी लग जानी है यदि यह बात पक्की हो गई फिर तो पार हो जाओगे अन्यथा दोबारा आना पड़ेगा।

महापुरुषों की कृपा के बिना यह बात हृदय में बसा ही नहीं करती है। इसका कारण यह है कि हमारा अध्यास लाखों करोड़ों सालों से पक चुका है। अतः यदि हम इसे जीव कह लें तो भी गनीमत है क्योंकि हमारा समय तो इसे शरीर-शरीर कहते ही निकलता जा रहा है। इस शरीर को ही हम लोग मैं-मैं कहते रहते हैं। यह रोज देखता है कि शरीर बिछुड़ते जा रहे हैं और हमारे शरीर ने भी बिछुड़ जाना है। फिर तुम सोचो तो सही कि तुम कौन हो। यदि यह इतना भी सोच ले कि मैं जीवात्मा हूँ तो फिर एक मंजिल ही आगे रह गई है। केवल एक कदम ही रह गया है। यदि महापुरुष को मिलकर यह एक कदम आगे बढ़ गया फिर तो पार हो गया, अन्यथा इस तट पर ही रह जाएगा। फलस्वरूप अगला जन्म पुनः धारण करना पड़ेगा।

इस प्रकार से गुरू महाराजजी कहने लगे योगिराज! जो तुम्हें यह सारा विस्तार दिखाई पड़ रहा है, यह सब इस तरह से है जैसे कि एक बीज के द्वारा बरगद का वृक्ष फैल जाता है, उसी प्रकार से एक परमात्मा ने ही स्वयं विस्तार करके अनेकानेक रूप धारण कर लिए हैं -

पसरिओ आपि होइ अनत तरंग ॥
लखे न जाहि पारब्रहम के रंग ॥ ***अंग - 275***

बस उसने एक से अनेक रंगों की रचना कर दी है, वास्तव में यह सब हैं नहीं। अतः जो ब्रह्म के सहारे हैं, वह ब्रह्म तुम हो। तुम अपने स्वरूप की पहचान करो। जब तुम्हारा आत्म साक्षात्कार हो गया तो जन्म-मरण उसी समय समाप्त

हो जाएगा। उस समय महाराज जी ने कृपा दृष्टि कर दी। कृपा दृष्टि करते ही उसके अन्दर ब्रह्म का प्रकाश हो गया, 'मैं' समाप्त हो गई, फलस्वरूप द्वैत भाव समाप्त होकर केवल एक ही शेष रह गया। सारे ख्याल, जो उसके अन्दर चल रहे थे, सब समाप्त हो गए और अब वह इस प्रकार से विनतियाँ करने लग पड़ा -

धारना - संसा मेरा ओ, उतर गिआ।
पिआरे जब ते दरशन पाइआ।

उतरि गइओ मेरे मन का संसा
जब ते दरसनु पाइआ ॥ *अंग - 1218*

उसकी शंका दूर हो गई और उसे यह पता लग गया कि -

बाजीगरि जैसे बाजी पाई ॥
नाना रुप भेख दिखलाई ॥
साँगु उतारि थंमि्ओ पासारा ॥
तब एको एकंकारा ॥ 1 ॥
कवन रुप दि्सटिओ बिनसाइओ ॥
कतहि गइओ उहु कत ते आइओ ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
जल ते उठहि अनिक तरंगा ॥ *अंग - 736*

समुद्र के अन्दर जो लहरें उठती हैं क्या वे समुद्र से अलग हैं? पानी में बुलबुले उठते हैं क्या वे पानी से अलग हैं? पानी के अन्दर जो झाग बनती है क्या वह पानी से अलग है?

जल तरंग अरु फेन बुदबुदा जल ते भिंन न होई ॥
अंग - 485

जल ते उठहि अनिक तरंगा ॥
कनिक भूखन कीने बहु रंगा ॥ *अंग - 736*

मान लो कई क्विन्टल सोना लेकर उसके गहने बना दिए, लेकिन जब उन्हें गला डाला तो वे पुनः सोना ही बन गया। गहने तो सोने का विस्तार था, जबकि वास्तव में तो वह सोना ही था। सारा संसार और सारी सृष्टियाँ उस परमात्मा का विस्तार ही हैं जबकि वास्तव में तो वह परमात्मा ही है और वही तो अपनी मौज में फैला हुआ है। दूसरा तो यहाँ पर कुछ भी नहीं है। जो माया है, वह तो केवल कहने के लिए है लेकिन वास्तव में तो यहाँ केवल 'सत्य' या परमात्मा ही है -

आपि सति कीआ सभु सति ॥ *अंग - 284*

सचे तेरे खंड सचे ब्रहमंड ॥ *अंग - 463*

गुरुमुख की जो निष्ठा है, वह कुछ दूसरे प्रकार की है, उसमें थोड़ा सा अन्तर है। पहले तो जीव को ऊर्ध्वमुखी बनाने के लिए, माया को मिथ्या कह कहकर उसे ऊपर की तरफ ले गए लेकिन जब उसे सत्य के दर्शन हुए तो उसने जाना कि यहाँ पर तो सत्य स्वयं ही है। जिसे हम माया कहते थे वह भी तो सत्य ही है क्योंकि यह माया भी तो परमात्मा से पृथक नहीं है। यह भी तो वाहिगुरू जी में से ही उत्पन्न हुई है और इसने उसी के अन्दर लीन हो जाना है। सृष्टियों की रचना होती हैं, यह एक जज्बा है -

जल ते उठहि अनिक तरंगा ॥
कनिक भूखन कीने बहु रंगा ॥
बीजु बीजि देखिओ बहु परकारा ॥
फल पाके ते एकंकारा ॥ 2 ॥
सहस घटा महि एकु आकासु ॥
घट फूटे ते ओही प्रगासु ॥
भरम लोभ मोह माइआ विकार ॥
भ्रम छूटे ते एकंकार ॥ 3 ॥
ओहु अबिनासी बिनसत नाही ॥
ना को आवै ना को जाही ॥
गुरि पूरै हउमै मलु धोई ॥
कहु नानक मेरी परम गति होई ॥ *अंग - 736*

केवल हउमै का पर्दा पड़ जाने के कारण परमात्मा दिखाई नहीं पड़ रहा था, लेकिन जब पूरे गुरू ने अपनी कृपा के द्वारा उस पर्दे को तोड़ दिया तो फिर दिखाई क्या पड़ा? यथा -

तूं पेडु साख तेरी फूली ॥
तूं सूखमु होआ असथूली ॥
तूं जलनिधि तूं फेनु बुदबुदा
तुधु बिनु अवरु न भालीऐ जीउ ॥ *अंग - 102*

वह स्वयं ही जल है, स्वयं ही तरंग है और स्वयं ही बुलबुला है तथा स्वयं ही झाग है -

तूं सूतु मणीओ भी तूंहै ॥
तूं गंठी मेरु सिरि तूंहै ॥
आदि मधि अंति प्रभु सोई
अवरु न कोइ दिखालीऐ जीउ ॥
तूं निरगुणु सरगुणु सुखदाता ॥
तूं निरबाणु रसीआ रंगि राता ॥
अपणे करतब आपे जाणहि
आपे तुधु समालीऐ जीउ ॥
तूं ठाकुरु सेवकु फुनि आपे ॥
तूं गुपतु परगटु प्रभ आपे ॥
नानक दासु सदा गुण गावै
इक भोरी नदरि निहालीऐ जीउ ॥ *अंग - 103*

योगिराज कहने लगा, सच्चे पातशाह जी! जिसे प्राप्त करने के लिए मैं हजारों वर्षों से मठ के अन्दर बैठा था, वह आज मुझे परम पदार्थ प्राप्त हो गया है। अब मेरी कोई भी

वासना शेष नहीं रह गई है।

गुरू महाराज जी कहने लगे, योगिराज! यदि तुम संसार के खेल को देखना चाहते हो तो फिर तुम्हें और अधिक जीवन प्रदान कर देते हैं तथा तुम्हारे शरीर को और अधिक हृष्ट-पुष्ट कर देते हैं।

वह (योगिराज) कहने लगा, नहीं, महाराज जी! मैंने जो कुछ देखना था, वह देख लिया, असली चीज देख ली अतः अब मुझे कोई वासना नहीं है। इसके बाद आपने महाराज जी से आज्ञा माँगी कि महाराज जी! अब मुझे किसी भी चीज की जरूरत नहीं है क्योंकि परम तत्व की आपने प्राप्ति करवा दी है। बस अब आप मुझे प्रस्थान कर जाने की आज्ञा प्रदान करो। उस समय उसने ब्रह्मरन्ध्र में से अपने श्वासों को बाहर निकाला और उस अनन्त में लय हो गया।

धारना - आवै जाइ निसंग
गुरमुख पिआरा-गुरमुख पिआरा।

पातशाह! एक गड्ढा सा खुदवा दीजिए और मुझे उठवा कर उसमें रखवा दीजिए। जो उसकी इच्छा थी उसके अनुसार वह उस गड्ढे में बैठ गया। प्राण अपान जो थे, श्वासों को खींच कर दसवें द्वार में ले गया -

नंम्र आन पुन कहि खनवायो।
बैठि बीच सभि पौन चड़ायो।
दसमे द्वार जोर को पावा।
ब्रहम रंधर को फोरि करावा।
श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ, पंना 1393

जब हवा का जोर डाला तो ब्रह्मरन्ध्र, जो कि दसवें द्वार का अन्तिम चिन्ह, सिर में होता है, को फाड़कर बाहर निकल गया -

जिउ जल महि जलु आइ खटाना ॥
तिउ जोती संगि जोति समाना ॥
मिटि गए गवन पाए बिस्राम ॥
नानक प्रभ कै सद कुरबान ॥ *अंग - 278*

इस प्रकार से महाराज जी ने उस भटकती आत्मा का कल्याण किया। इस सम्बन्ध में उसके समर्थ गुरु ने उसे बताया था कि कल्युग के अन्दर गुरू नानक का पाँचवां स्वरूप गुरू अरजन देव आएगा, वह तुम्हारे ऊपर दया करके तुम्हें परम पद प्राप्त करवा देगा। दरअस्ल जिस वस्तु को तुम चाहते हो वह मेरे पास नहीं है, वह तो तुम्हें कल्युग में जाकर ही प्राप्त हो सकेगी।

अतः साधुसंगत जी! जो गुरवाणी है, इसके प्रकाश के अन्दर हमने सारी विचार की है। वाहिगुरू जी कृपा करें हमें समझ प्राप्त हो जाए। कम से कम हमें यह समझ तो प्राप्त हो जाए कि यहाँ परमात्मा ही अपना सारा खेल कर रहा है। शनैः शनैः हम अपनी मैं को दूर करना शुरू करें क्योंकि हम लोगों के हृदय राग, द्वैष, अभिन्वेश, अस्मिता, व अविद्या के साथ भरे पड़े हैं। जब तक हमें पाँच क्लेश मथ रहे हैं, तब तक हमें सुख प्राप्त हो ही नहीं सकता है। गुरू जी फुरमान करते हैं कि -

बाली रोवै नाहि भतारु ॥
नानक दुखीआ सभु संसारु ॥ *अंग - 954*

उस दुख में से निकलने का केवल एक ही साधन है -

मंने नाउ सोई जिणि जाइ ॥
अउरी करम न लेखै लाइ ॥ *अंग - 954*

नाम क्या है? नाम परिपूर्ण शक्ति है, वह अपने आप ही खेल करती है। यदि यह व्यक्ति इस बात को मान जाए तो फिर इसके अन्दर इसी जन्म में प्रकाश हो जाता है। यथा-

मंने की गति कही न जाइ ॥
जे को कहै पिछै पछुताइ ॥
कागदि कलम न लिखणहारु ॥
मंने का बहि करनि वीचारु ॥
ऐसा नामु निरंजनु होइ ॥
जे को मंनि जाणै मनि कोइ ॥ *अंग - 3*

दरअस्ल मन को मनाना ही बहुत कठिन है। कोई विरला ऐसा शूरवीर है जो मन को मना ले। मन की सुरक्षा के लिए बहुत ही जबरदस्त फौजें हैं। आसुरी सेनाएँ जैसे काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, आशा, शंकाएं, तृष्णा, कपट, छल आदि असंख्य चीजें हैं, जो कि मन की सहायक हैं, ये मन को कोई अच्छी बात मानने ही नहीं देती हैं। ये मन को निरन्तर कहती रहती हैं कि 'नाम' आदि की बातों को बिल्कुल भी नहीं मानना है। जो बात गुरवाणी कहती है, वह है - नाम का रस लेकिन इस तरफ ये नकारात्मक चीजें, व्यक्ति को जाने ही नहीं देती हैं। शराब का रस लेना हो, वह एक सैकेंड में मिल जाएगा, इसलिए मन को कितना भी समझा लो लेकिन यह मानता ही नहीं है। गुरू जी कहते हैं-

मन समझावन कारने कछूअक पड़ीऐ गिआन ॥
अंग - 340

मन को समझाने की बातें हैं, इसलिए मन को समझाना चाहिए। अब सवाल पैदा होता है कि यह मन मानता क्यों नहीं है? मन इसलिए नहीं मानता है क्योंकि मन के अन्दर शक्ति नहीं है। जब इसके अन्दर दैवीय शक्तियाँ या दैवीय गुण आ जाते हैं और जब यह नाम का अभ्यास करने लग पड़ता है तो फिर यह मन मान जाता है।

आत्म मार्ग के अन्दर तुम इन चीजों को पढ़ो, उससे

तुम्हारा अध्यास पक जाएगा, नाम की तरफ ख्याल जाने लगेगा और नाम में रुचि लगने लग जाएगी। नाम जपने से वे सारी चीजें प्राप्त हो जाएंगी।

हम लोग गुरू तो श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी को मानते ही हैं लेकिन हम लोग विनती करते हैं कि हे गुरू महाराज जी! हमारे ऊपर आप कृपा कर दो लेकिन न तो हमसे तन माँगो, न धन माँगो और न ही मन माँगो। हाँ यदि तुम धन माँगते हो तो वह तो हम दे भी सकते हैं लेकिन हमसे तन नहीं माँग लेना।

गुरू जी कहते हैं कि हमें तो तन भी चाहिए।

सिक्ख कहते हैं कि चलो तन भी दे देंगे लेकिन महाराज जी! अब आप चाहे कहो या न कहो मन तो हम नहीं दे पाएंगे।

गुरू जी कहते हैं कि वाह! फिर तुम्हारी सिक्खी का मेरे साथ कौन सा सम्बन्ध रह गया?

सिक्ख कहता है कि चाहे कुछ भी हो आप रियायती नम्बर देकर ही पास कर देना।

गुरू जी कहते हैं कि मन ने तो तुम्हें पास ही नहीं होने देना है क्योंकि यह तो चीज ही फेल कर देने वाली है, और इसी को तुमने अपने पास रख लिया है। यदि तुमने देना ही है तो मुझे तो अपना मन दे दो और धन व तन अपने पास ही रख लो। जब मन आ गया तो तन क्या करेगा? जब कोई संकल्प-विकल्प ही नहीं रहेगा तो फिर यह तो बस यहीं बैठा रह जाएगा।

देख लो! कोई भी ख्याल न करो, संकल्प व विकल्प का त्याग कर दो, अभी यहीं पर समाधि लग जाएगी। यह ख्याल ही तो हमें स्थिर नहीं होने देता है। इसीलिए गुरू कहता है कि हमें अपना मन दे दो -

मनु बेचै सतिगुर कै पासि ॥
तिसु सेवक के कारज रासि ॥ *अंग - 286*

अतः हम लोग अपना मन देने के लिए तैयार नहीं होते हैं और इसीलिए हमारा जन्म-मरण समाप्त ही हीं हो पाता है। गुरू तो हमारे ऊपर अपनी कृपा करने के लिए तैयार है लेकिन हम कहते हैं कि चाहे अन्य कोई भी चीज ले लो, बस मन मत लो। जब हम गुरू को अपना मन दे देंगे तो फिर हमारे पास क्या रह जाएगा? फिर न तो हमारा शरीर ही उठ पाएगा और न पैसा ही कोई लाभ दे पाएगा।

अतः तत्व बात को समझने की कोशिश करो। यही कारण है कि यदि हम थोड़ा सा भी सत्संग करते हैं लेकिन सारी बात को ग्रहण करते हुए करते हैं तो उससे फल बहुत अधिक प्राप्त होता है -

कई कोटिक जग फला सुणि गावनहारे राम ॥
अंग - 546

अपने आपको **subjective mood** में लाओ, देखो जैसे विद्यार्थी पढ़ते हैं, उस प्रकार से ध्यानपूर्वक न केवल तुम पढ़ो बल्कि उस पर अमल करने की भी कोशिश करो। इस प्रकार से कर पाना तभी सम्भव हो पाएगा, जबकि तुम्हें उस पथ पर चलने वालों की संगत प्राप्त हो जाएगी। विचार का तात्पर्य यह है कि जब तुम्हें ऐसे महापुरुषों की संगत प्राप्त हो जाएगी जो कि ब्रह्ममुहुर्त में जागते हैं, भजन बन्दगी करते हैं, नाम जपते हैं। उनके पास आने से ही ऐसा प्रभाव पड़ता है -

आवै साहिबु चिति तेरिआ भगता डिठिआ ॥
अंग - 520

अतः साधु संगत जी! मैंने तो एक विनती ही करनी है क्योंकि हम लोगों को सत्संग करते हुए बहुत सारा समय बीत चुका है, इसलिए अब यहाँ से आगे बढ़ो और पार हो जाओ। यदि यहाँ से अब चूक गए तो फिर न जाने क्या बने, समय दोबारा ऐसा आए या न आए। बात तो छोटी सी ही है कि-

नानक लेखै इक गल होरु हउमै झखणा झाख॥
अंग - 467

यदि यह दृढ़ विश्वास हो गया कि यहाँ पर तो कण-कण में परमेश्वर ही है और वही सत्य है तो फिर यह सहज में ही पार हो सकता है। अब गुरू जी हमें किसी झूठी बात पर तो लगाते नहीं हैं, वे तो हमें सच्ची बात बतलाते हैं कि यहाँ तो परमात्मा ही सर्वत्र है और वही अपनी मौज में खेल रहा है। यदि तुम इस बात को नहीं मानते हो तो फिर तुम्हारी मर्जी है और फिर तो तुम्हें जन्म-मरण के चक्रव्यूह में घूमना ही पड़ेगा। यदि तुम्हें फिर कभी सत्संग प्राप्त हो जाए तो फिर कल्याण की सम्भावना बन सकती है। यथा -

कबहू साधसंगति इहु पावै ॥ उसु असथान ते बहुरि न आवै ॥ अंतरि होइ गिआन परगासु ॥ उसु असथान का नही बिनासु ॥ मन तन नामि रते इक रंगि ॥ सदा बसहि पारब्रहम कै संगि ॥ जिउ जल महि जलु आइ खटाना ॥ तिउ जोती संगि जोति समाना ॥ मिटि गए गवन पाए बिस्राम ॥ नानक प्रभ कै सद कुरबान ॥
अंग - 278

अतः आप सब इस अवस्था पर पहुँचो। अब समय अनुमति नहीं दे रहा है, इसलिए अब यहीं पर समाप्ति है।

भाई जमाल जी को गुरू हरिगोबिन्द साहिब जी के द्वारा अनुभवी मार्ग दर्शन

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक मई, पृष्ठ - 28)

मस्तूआणा वाले महापुरुष बाबा अतर सिंह जी के मन में तीव्र वैराग्य उत्पन्न हुआ कि आखण्ड जप शुरू करें। आप जी श्री हुजूर साहिब गए हुए हैं और आप जी ने वहाँ पर बैठ कर सवा लाख जपुजी साहिब के पाठ किए। उसके बाद आप चार मील दूर चले गए और गोदावरी के तट पर बैठ कर अखण्ड जाप करने के लिए बैठ गए। पहला दिन बीत गया, दूसरा दिन बीत गया। दूसरे दिन वहाँ के हेड ग्रन्थी जी को सपने में महाराज जी कहने लगे, अमुक जगह पर हमारा प्रेमीजन बैठा हुआ है, जाओ उसे भोजन देकर आओ। उसने कोई ध्यान नहीं दिया। तीसरा दिन आ गया, उसे फिर इसी प्रकार का सपना आया। अब उसने अपनी धर्मपत्नी को कहा कि कल भी मुझे इसी प्रकार का सपना आया था और आज भी आया है। वैसे ही कोई सपना आ गया होगा क्योंकि यहाँ पर इस प्रकार के सिक्ख अक्सर आते ही रहते हैं, इसलिए तुम्हें इसी प्रकार के सपने आएँगे और किस प्रकार के आएँगे?

अब चौथा दिन आ गया, उसे फिर आवाज आई कि जाओ, अमुक जगह पर भोजन देकर आओ। वह अब भोजन लेकर चल पड़ा। साथ ही उसके मन में ख्याल आता है कि मैं तो यूँ ही सपने पर विश्वास करके चल पड़ा हूँ, यह तो वैसे ही मन का अध्यास हुआ करता है। कोई बात मन के अन्दर गहरी चली गई तो फिर उससे सम्बन्धित ख्यालों का निष्कासन सपने के रूप में होने लग पड़ेगा। वह कुछ दूरी पर जाकर वापिस लौट आया। पाँचवां दिन आ गया। सपने के अन्दर उसे महाराज जी कहने लगे, प्रेमीपुरुष! हम तुम्हें रोज कहते हैं कि मेरा प्रेमीजन चार मील की दूरी पर बैठा हुआ है, लेकिन तुम उसके पास तक जाकर फिर लौट आए हो? वह पुनः गया और फिर लौट आया। अब छठा दिन आ गया। आज उसे बहुत सख्त शब्दों में आदेश हुआ। आज वह चार मील की दूरी तक चला गया लेकिन महापुरुष वहाँ से चार मील और आगे चले गए। उसे पुनः सपना आया कि महापुरुष चार मील और आगे चले गए हैं। जब सातवें दिन वह हेड ग्रन्थी उस स्थान पर पहुँचा तो क्या देखता है कि महापुरुष दरिया के अन्दर बैठे हुए हैं, आपकी अखण्ड समाधि लगी हुई है, गले तक के पानी में आप चौकड़ी लगा कर बैठे हुए हैं। हैड ग्रन्थी जी ने वहाँ पर जाकर महापुरुषों को आवाज लगाई तथा सारी वार्ता सुनाई।

इस प्रकार से साधु संगत जी! रोजी देना वाला तो परमात्मा स्वयं है। बहुत सारे महात्माओं ने इस बात को आजमा-आजमा कर देखा है। गुरवाणी कोई ऐसी चीज नहीं है, जिसमें कि कोई किन्तु या परन्तु की कोई गुंजाइश हो। यदि हम गुरवाणी के बारे में ऐसा सोचते हैं तो इसका तात्पर्य यह है कि गुरवाणी के ऊपर हमें विश्वास ही नहीं है। जब गुरवाणी के अर्थ हम अगर-मगर करके करते हैं तो फिर वह गलत बात हो जाती है क्योंकि गुरवाणी में तो जो भी लिखा है, वह सही ही लिखा है। बस उसे मानना है और हमने उसकी कमाई करनी है। जब तक हम गुरवाणी पर अमल नहीं करते हैं, तब तक हम इस भवजल से पार नहीं हो सकते हैं।

अतः मैं यह विनती कर रहा था कि भाई जमाल को गुरू छठे महाराज जी फुरमान करने लगे कि भाई जमाल! सर्वप्रथम तुम यह समझने की कोशिश करो कि तुम कौन हो? देखो! यह शरीर पाँच तत्वों का बना हुआ है। दो प्रकार के ख्यालों वाले लोग इस संसार में होते हैं, एक होते हैं नास्तिक वृत्ति वाले और दूसरे होते हैं आस्तिक वृत्ति वाले। हम सब लोग नास्तिक वृत्ति वाले लोगों के दायरे में आते हैं। एक होते हैं आत्मवादी जो कि भौतिक वृत्ति वाले होते हैं। इस प्रकार के छः सम्प्रदाय भारत में थे, इसमें चारवाक वगैरह हुए हैं, ये लोग कहते थे कि परमात्मा जैसी कोई भी चीज है ही नहीं। घास, घास से पैदा होता है, जानवर, जानवर से पैदा होता है। न कोई नर्क है और न कोई स्वर्ग है। जिस प्रकार से पशु पक्षी पैदा होते हैं, इसी प्रकार से व्यक्ति उत्पन्न हो जाते हैं और मरने के बाद सब समाप्त हो जाता है, लेखा वगैरह किसने व किसे देना है। **Eat drink and be merry for we shall have to die.**

खाने-पीने और व्यभिचार की बहुतायत इन्हीं प्रकार के विचारों के कारण शुरू हुई है क्योंकि ये लोग आगे या परलोक की बात को मानते नहीं थे। इन्हें यदि कोई चीज बाँधती थी तो वह था कानून। वैसे जहाँ कानून की पहुँच नहीं थी, वहाँ पर व्यक्ति चोरी कर सकता था। केवल कानून के भय से व्यक्ति कहाँ सुधर सकता है? यह तो धर्म ही है जो कि व्यक्ति को ऐसे बाँध देता है कि वह बुराइयों से तौबा कर लेता है अन्यथा जहाँ पर कानून का हाथ नहीं पहुँचता है वहाँ पर यह व्यक्ति बुराई कर लेता है। ऐसी जगहों पर व्यक्ति मिलावटें कर लेगा, आय कर की चोरी कर लेगा, गलत काम कर लेगा क्योंकि वह समझता है कि यहाँ पर कानून के दायरे में वह नहीं आ पाएगा। केवल कानून के द्वारा समाज में कभी सदाचार नहीं आ पाया करता है। सदाचार तो सदैव धर्म से ही पैदा हुआ करता है। यही कारण है कि जिस शासन में, जिस राज्य में, धर्म की प्रधानता नहीं है, वह राज्य अच्छी किस्म का नहीं हुआ करता है। वह तो इस प्रकार का होता है जैसे कि कुछ डाकू लोग एकत्र होकर सत्ता पर काबिज होकर बैठ गए हैं। उनके अन्दर धर्म का भाव न होने के कारण उनका जीवन केवल स्वार्थ भाव वाला ही हुआ करता है।

इसी प्रकार से अपने यहाँ बौद्ध धर्म, जैन धर्म, न्याय शास्त्र, विशेषक, मीमांसा, आदि चार तत्वों को मानते हैं, वे कहते हैं कि जीव वगैरह कोई नहीं है। यह अणुओं की आपसी हिलजुल है, जिसके द्वारा इस शरीर में हिलजुल उत्पन्न हो जाती है अर्थात इसमें चेतनता आ जाती है। इन सबका गुरू है आधुनिक विज्ञान। ये कहते हैं कि पहले परमाणुओं से इलैक्ट्रान, प्रोटान तथा न्युट्रान की पारस्परिक लहरों के साथ जब चुम्बकीय लहरें मिलती हैं तो फिर दिमाग के अन्दर जागृति आ जाती है। उनकी बात तो एक सीमा तक ठीक है लेकिन लहरों के बटन को कौन दबाता है? जब दिमाग के अन्दर जागृति आ जाती है तो फिर उसका दिमाग सोचने व समझने लग पड़ता है, जब उसका सम्बन्ध टूट जाता है तो फिर वह मर जाता है, ऐसा विज्ञान का मत है। फिर ये कहते हैं कि यह सारा कुछ तो ऊर्जा से हुआ है, लेकिन फिर वही सवाल खड़ा हो जाता है कि ऊर्जा को कार्य में कौन लेकर आया? फिर कहते हैं कि एक बड़ा धमाका हुआ लेकिन फिर वही सवाल आ जाता है कि धमाका किसने किया? यहाँ आकर सारे रुक जाते हैं। जो आत्मवादी हैं वे यह कहते हैं कि जो पाँच तत्व हैं, ये तो जड़ हैं लेकिन जीव का अस्तित्व पाँचों तत्वों से पृथक है। यह परमात्मा की अंश है और परमात्मा से बिछुड़ा हुआ है। जड़ शरीर के अन्दर निवास करने के कारण यह स्वयं को जीव कहलवाता है। गुरू जी भी इसी प्रकार से फुरमान करते हैं कि -

धारना - देही दे विच आइआ जीव
बंनिआँ हुकम दा।

संजोगु विजोगु धुरहु ही हूआ ॥ ***अंग - 1007***

गुरू जी कहते हैं कि मिलना तथा बिछुड़ना दरगाह से ही होता है और इसके साथ -

पंच धातु करि पुतला कीआ ॥ ***अंग - 1007***

पाँच तत्वों को जोड़कर एक पुतला बना दिया -

साहै कै फुरमाइअड़ै जी
देही विचि जीउ आइ पइआ ॥ ***अंग - 1007***

वाहिगुरू जी का हुक्म हुआ, उसके द्वारा जो यह जीव था, इसने शरीर में आकर निवास कर लिया। कई प्रकार के धर्म यह भी कहते हैं कि जब परमात्मा ने इस जीव को शरीर के अन्दर प्रवेश करवाया तो उसी समय यह बाहर आ गया। परमात्मा ने पूछा, ऐ जीव! क्या हो गया कि तुम बाहर आ गए? जीव बोला कि अन्दर तो अन्धकार पड़ा हुआ है। परमात्मा ने कहा, अच्छा तुम जाओ मैं उस स्थान को (जहाँ जीव ने रहना है) अपनी दरगाह के साथ जोड़ देता हूँ। इसके बाद जब यह जीव शरीर रूपी गुफा के अन्दर गया तो अब वहाँ पर संगीत भी है और प्रकाश भी है। गुरू जी फुरमान करते हैं कि -

नउ दरवाजे काइआ कोटु है दसवै गुपतु रखीजै ॥ बजर कपाट न खुलनी गुर सबदि खुलीजै ॥
अनहद वाजे धुनि वजदे गुर सबदि सुणीजै ॥
अंग - 954

वहाँ पर आत्मिक संगीत, दिन-रात बिना बजाए ही लगातार बजता रहता है -

तितु घट अंतरि चानणा करि भगति मिलीजै ॥
अंग - 954

इसके अन्दर प्रकाश ही प्रकाश है, वहाँ पर अन्धकार नहीं है। जब वहाँ पर प्रकाश ही प्रकाश है तो वहाँ पर दिखाई क्या पड़ता है?

सभ महि एकु वरतदा जिनि आपे रचन रचाई ॥
अंग - 954

वाहु वाहु सचे पातिसाह तू सची नाई ॥ अंग - 947

अतः वाहिगुरू जी के -

साहै कै फुरमाइअड़ै जी
देही विचि जीउ आइ पइआ ॥
जिथै अगनि भखै भड़हारे ॥ ***अंग - 1007***

कहते हैं कि वहाँ तो बहुत तीव्र ज्वाला धधक रही थी-

उरध मुख महा गुबारे ॥ ***अंग - 1007***

वहाँ पर उल्टा मुँह था और वह भी घोर अन्धकार में। वहाँ फिर -

सासि सासि समाले सोई
ओथै खसमि छडाइ लइआ ॥ ***अंग - 1007***

प्रत्येक श्वास में वाहिगुरू निवास करता था। जब वह वाहिगुरू जी को प्रतिक्षण याद करता था तो फिर वाहिगुरू जी ने ही उसे छुड़वा लिया -

विचहु गरभै निकलि आइआ ॥
खसमु विसारि दुनी चितु लाइआ ॥ ***अंग - 1007***

कहने लगे कि वहाँ से तो आ गया लेकिन फिर हुआ क्या? जिसने उसकी प्रतिक्षण रक्षा की थी, उसे यह भूल गया और भूल जाना तो हम लोगों का पक्का स्वभाव ही है। हम लोगों के साथ कोई कितना भी बड़ा परोपकार क्यों न कर ले, हम उसे भुला ही देते हैं। अब गुरू या परमात्मा से बड़ा उपकार तो हमारे ऊपर कोई भी कर ही नहीं सकता है। गुरवाणी जितना परोपकार हमारे ऊपर कौन कर सकता है? लेकिन हम लोग तो एहसान फरामोश हैं। सांसारिक तौर पर भी यदि कोई आदमी किसी पर एहसान करता है, कोई किसी का भला करता है, तो उसे पूरी तरह से भूल जाना हमारी प्रकृति का ही एक हिस्सा है और प्रकृति के इसी हिस्से में हमने परमात्मा को भी शामिल किया हुआ है -

धारना - ला लिआ गाफला, चित नाल दुनीआँ दा।

जिसने इसे पूर्ण सुरक्षा प्रदान की थी उसे यह पूरी तरह से भूल ही गया है -

आवै जाइ भवाईऐ
जोनी रहणु न कितही थाइ भइआ ॥ ***अंग - 1007***

अब परिणाम क्या हुआ? इसका परिणाम यह हुआ कि बस अब जन्म लेते रहो और मरते रहो यानि कि अवागमन का चक्र गले में पड़ गया।

इस प्रकार महाराज जी कहते हैं कि ऐ प्रेमीपुरुष! इस शरीर में परमात्मा के हुक्माधीन ही परमात्मा की अंश (आत्मा) आकर निवास करती है, जिसे कि हम जीव कहते हैं। मोटे तौर पर तुम कम से कम यह मान लो कि मैं जीव हूँ, शरीर नहीं। इस बात को समझने का यत्न करो कि इस शरीर ने तो यहाँ पर हमेशा रहना ही नहीं है -

सुनहु रे तू कउनु कहा ते आइओ ॥
एती न जानउ केतीक मुदति चलते खबरि न पाइओ॥
अंग - 999

गुरू जी कहते हैं कि ऐ भद्रपुरुष! सुनो! क्या तुम्हें पता है कि तुम कौन हो और कहाँ से आए हो? पहली बात तो यह है कि इस बात को हम सोचते ही नहीं हैं कि हम कहाँ से आए हैं? हमें चलते हुए कितने देर हो चुकी है? क्या कहीं पर हमारा कोई टिकाना भी है? हम इतने गाफिल हो चुके हैं कि इस बात को सुनने के लिए हमारे पास कोई समय ही नहीं है। वैसे तो हम स्वयं को बहुत बुद्धिमान व सयाने व्यक्ति मानते हैं, हम लोग दूसरों को बड़े-बड़े दर्शनों की बातें समझाने लग पड़ते हैं लेकिन हमें इस बात का कुछ भी पता नहीं लगता है कि हम कौन हैं और हम कहाँ से आए हैं? इसलिए हमारी तो एक विनय है कि महाराज जी! आप ही हमें इस बारे में बतलाने की कृपा करो -

धारना - केते नाग कुली महि आए,
केते पंख उडाए ने।

केते रुख बिरख हम चीने केते पसू उपाए ॥
केते नाग कुली महि आए केते पंख उडाए ॥
अंग - 156

कई जनम भए कीट पतंगा ॥
कई जनम गज मीन कुरंगा ॥
कई जनम पंखी सरप होइओ ॥
कई जनम हैवर ब्रिख जोइओ ॥ 1 ॥
मिलु जगदीस मिलन की बरीआ ॥
चिरंकाल इह देह संजरीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥
अंग - 176

महाराज जी कहते हैं ऐ बन्धु! इस प्रकार की तुम्हारी यह यात्रा है। 'सुनहु रे तू कउनु कहा ते आइओ।।' क्या हम इस चीज को मानते हैं? हम तो यही समझते हैं कि हम तो शुरू से मनष्य ही बनते आ रहे हैं और हमने आगामी जन्मों में भी इसी प्रकार से मनुष्य ही बनते रहना है। 'ऐती न जानउ केतीक मुदति चलते खबरि न पाइओ।।' क्या तुम्हें पता है कि तुम कभी पत्थर भी बने, कभी गर्भ में ही चक्कर काटते रहे, कभी विभिन्न प्रकार की योनियों में भटकते रहे -

कई जनम सैल गिरि करिआ ॥
कई जनम गरभ हिरि खरिआ ॥
कई जनम साख करि उपाइआ ॥
लख चउरासीह जोनि भ्रमाइआ ॥ ***अंग - 176***

विभिन्न प्रकार की योनियों में तुम घूमते रहे और अब तुम क्या हो? अब तुम्हें मनुष्य कहते हैं -

धारना - तेरा रूखिआ मानस नाउं,
पुतला है तूं खाक दा।

कबीर माटी के हम पूतरे मानसु राखिओ नाउ ॥
चारि दिवस के पाहुने बड बड रुंधहि ठाउ ॥
अंग - 1367

मिट्टी के पुतलों का नाम मनुष्य रख दिया यह मनुष्य फिर आगे बढ़ गया। सरदार बहादर, फलां, अमुक और न

जाने इसे कितनी उपाधियां मिल गई हैं। यह इस संसार पर चार दिनों का मेहमान आया था लेकिन यह न जाने कितना बड़ा विस्तार करके बैठ गया, कितनी ही लड़ाइयाँ आदि शुरू करके यह बैठ गया है। अब इससे अधिक मूर्खता की बात क्या होगी।

अतः महाराज जी कहने लगे, भाई जमाल! इस प्रकार की बनावट इस शरीर की है और इसके अन्दर परमात्मा ने अपनी ज्योति डाल दी है। वास्तव में तो तुम परमात्मा की ज्योति ही हो, शरीर नहीं हो।

शरीर तो पाँच तत्वों से मिलकर बना है। तुम्हारी वास्तविकता तो परमात्मा की ज्योति ही है लेकिन यह उस परमात्मा से अलग हो गया है।

जमाल कहने लगा, महाराज जी! जब मैं वाहिगुरू जी के साथ जुड़ा हुआ था तो फिर अलग कैसे हो गया? मुझे फिर परमात्मा भूल कैसे गया? क्योंकि फिर तो मेरे अन्दर भी वही शक्तियाँ हैं जो कि वाहिगुरू जी के अन्दर हैं। यदि मैं उसकी ज्योति हूँ, उसका पुत्र हूँ, तो फिर मेरे अन्दर भी वही शक्तियाँ होनी चाहिए थीं और दूसरी बात यह है कि परमात्मा के ऊपर तो माया पड़ती नहीं है फिर मेरे ऊपर माया कैसे पड़ गई?

महाराज जी कहने लगे, भाई जमाल! जिसने इस शरीर का निर्माण किया है, उसने इसके साथ ही अहंभाव का जज्बा भी इसके अन्दर डाल दिया है। जिस समय उस ज्योति ने इसके अन्दर आकर प्रकाश किया और उसके फलस्वरूप इसके अन्दर जागृति आई, उस समय यह उस परम सत्ता को तो भूल गया और इसने अपना पृथक अस्तित्व निर्मित कर लिया और परमात्मा ने इसके अन्दर अहंतत्व भी डाल दिया।

जिनि रचि रचिआ पुरखि बिधातै नाले हउमै पाई ॥
जनम मरणु उस ही कउ है रे ओहा आवै जाई ॥
अंग - 999

अब महाराज जी ने बात स्पष्ट कर दी है कि वह ज्योति न तो जन्म लेती है और न ही वह मरती है। बस अहंभाव के प्रभाव के कारण वह ज्योति जीव कहलवाने लग पड़ी है और वही जीव जन्म ले लेता है और मर जाता है तथा इसी चक्र में पड़ा हुआ चल रहा है। जबकि वास्तव में तो यहाँ पर परमात्मा के अतिरिक्त दूसरा कुछ भी नहीं है -

बाजीगरि जैसे बाजी पाई ॥
नाना रुप भेख दिखलाई ॥
साँगु उतारि थंमि्ओ पासारा ॥
तब एको एकंकारा ॥ अंग - 736

एक मूरति अनेक दरसन कीन रुप अनेक॥
खेल खेल अखेल खेलन अंत को फिर एक॥
जापु साहिब

गुरू जी कहते हैं कि यह तो बस एक खेल हो रहा है-

बरनु चिहनु नाही किछु रचना
मिथिआ सगल पसारा ॥
भणति नानकु जब खेलु उझारै तब एकै एकंकारा ॥
अंग - 1000

जब वह खेल को उजाड़ देता है, उसे समाप्त कर लेता है, उस समय वह अकेला ही वाहिगुरू रह जाता है। यह सारा विस्तार होता है -

जब उदकरख करा करतारा॥
प्रजा धरत तब देह अपारा॥
जब आकरख करत हो कबहूं॥
तुम मैं मिलत देह धर सभहूं॥
कबयो बाच बेनती चौपई, पा: 10

उसके स्वरूप निःशंक रूप अनूप हैं लेकिन वास्तव में वह एक ही है। कहीं वह राजा बन गया, कहीं पर वह रंक बन गया, कहीं पर वह बादशाह बन गया -

अंडज जेरज सेतज कीनी॥
उतभुज खानि बहुरि रचि दीनी॥
कहूं फूलि राजा ह्वै बैठा॥
कहूं सिमटि भयो संकर इकैठा॥
कबयो बाच बेनती चौपई, पा: 10

कहीं पर यह फूल कर बैठा हुआ है, राजा बना हुआ है, कहीं पर समाधि लगा कर बैठा हुआ है।

सिगरी स्रिसटि दिखाइ अचंभव॥
आदि जुगादि सरुप सुयंभव॥
कबयो बाच बेनती चौपई, पा: 10

अतः साधु संगत जी! हउमै के कारण अन्तःकरण की जो चेतन सत्ता है, इस बात को समझने का यत्न करो। इसके अन्दर 'मैं' भाव आ जाता है, उनकी 'मैं' दृढ़ हो जाती है और यह दिमाग की एक स्थिति है। एक दिमाग की स्थिति वह होती है जिसमें से वाहिगुरू-वाहिगुरू दिखाई पड़ता है और दूसरी स्थिति वह होती है जिसमें अपना स्वार्थ दिखाई पड़ता है, अपने बेगाने दिखाई पड़ते हैं, अच्छे-बुरे और मित्र व शत्रु दिखाई पड़ते हैं, हित-अहित नजर आता है, लाभ-हानि और दुख-सुख नजर आता है। दरअस्ल यह दिमाग की स्थिति पर निर्भर करता है। इस दिमाग की स्थिति को अध्यास कहा जाता है कि उसका अध्यास पक गया है। हम लोग उस चीज को तो भूल गए हैं और अध्यास के अन्दर ही फँस गए हैं। हउमै ने हमें अलग कर दिया है।

महापुरुष कथा सुनाकर किसी बात को बतलाया करते हैं, वैसे बतलाते तो वे बहुत सारे तरीकों से हैं लेकिन महापुरुषों के जो वचन होते हैं वे जीव के कल्याणार्थ उसे समझाने के लिए ही होते हैं। एक बार एक जगह पर एक रूई को धुनने वाला एक धुनिया रहा करता था। उनके पास एक सन्त प्रत्येक वर्ष आता और अपनी रजाई को धुनवा कर तथा नए सिरे से भरवा कर ले जाता। उस रजाई को वह धुनिया बहुत ही प्रेमपूर्वक बना कर दिया करता था। वे सन्त जी एक साल आते थे और दूसरे साल नहीं आते थे यानि कि वे तीसरे वर्ष रजाई को भरवाने आया करते थे। एक दिन उसे एक अलग प्रकार का सपना आया। सपने में उसके पास एक राजा का दूत आया और उसने कहा, ऐ धुनिया बन्धु! राजा ने मुझे पचास गाड़ी रुई देकर भेजा है और उस सारी रुई को तुम्हीं ने धुनकर रजाइयाँ व गद्दे आदि भरने हैं क्योंकि राजा ने इस बार उन सभी रजाइयों को पुण्य हेतु हरिद्वार जाकर दान करना है। इस बार तुम्हें इसका कोई पारिश्रमिक वगैरह भी अदा नहीं किया जाएगा। वह कहने लगा मैं अकेला व्यक्ति हूँ, इसलिए मैं पचास गाड़ी रूई को धुन कर रजाइयाँ कैसे बना पाऊँगा? यह मुझसे नहीं हो पाएगा।

यह उत्तर सुनकर उस राजा का दूत कहने लगे, यदि तुम यह कार्य नहीं करोगे तो फिर तुम्हें राजदण्ड मिलेगा, तुम्हारे कोड़े लगेंगे तथा तुम्हें कैद भी हो सकती है। वहाँ पर राजा के दूत और धुनिया के बीच झगड़ा बहुत बढ़ गया, जिसके फलस्वरूप धुनिया के दिमाग पर असर हो गया (सपने में)।

उधर जिस समय उस धुनिया की नींद खुली तो उस समय तक उसका अध्यास पक चुका था और वास्तविक सच्चाई वाला अध्यास दूर हो गया। अब वह एक ही बात कहता जा रहा है कि इतनी रुई को मैं कैसे धुन पाऊँगा? उसने काम छोड़ दिया और घर बार छोड़कर इधर-उधर भटकने लग पड़ा। प्रत्येक समय वह एक ही बात कहता जा रहा है कि इतनी रूई को मैं नहीं धुन पाऊँगा।

यहाँ पर हम लोगों ने कई प्रकार के लोग देखे हैं जिनके कि दिमाग खराब हो गए होते हैं। यदि किसी ने किसी का कर्ज अदा करना हो अथवा किसी का पैसा मर जाए तो वे कहने लग पड़ते हैं कि मेरे पैसे खा लिए हैं। साधु संगत जी! यह सब दिमाग की एक विशेष प्रकार की स्थिति के कारण होता है। इस चीज की कोई गारंटी नहीं है कि हमारा दिमाग हमेशा ठीक कार्य ही करता रहे। पता नहीं किस समय यह चक्कर खा जाए, बहुत सारे लोग, हम लोगों ने, इस प्रकार के देखे हैं।

इस प्रकार से उस धुनिया का अध्यास पक गया है। जब तीसरे वर्ष वही महात्मा आए तो उन्होंने पूछा कि वह धुनिया कहाँ चला गया है? आस-पास के लोगों ने कहा कि वह तो पागल हो गया है। महापुरुष बोले, अच्छा! बहुत तो बिल्कुल ठीक ठाक था? क्या कोई कारण हो गया था? वह कोई बात कहता है?

उन्होंने बताया कि महात्मा जी! वह तो एक ही बात कहता रहता है कि मैं पचास गाड़ियाँ रूई को नहीं धुन पाऊँगा, मैं इतनी रजाइयाँ नहीं धुन पाऊँगा।

महात्मा ने सोच लिया कि हो सकता है उसे कोई भयानक सपना आया हो और उसका असर उस धुनिया के दिमाग में गहरा चला गया हो यानि कि इसका अध्यास पक गया हो, फलस्वरूप वह पागलों का सा व्यवहार करने लग पड़ा हो। प्रायः आप जितने पागलों को देखोगे उन सबके ऊपर किसी न किसी चीज का गहरा प्रभाव पड़ा होता है और वे उसी चीज को दोहराते हैं।

महात्मा ने उस रूई के धुनिया को ढूँढ़ा और उससे हालचाल पूछा तथा उसे बतलाया कि मैं तुम्हें एक खुशखबरी सुनाने आया हूँ।

धुनिया बोला, किस चीज की खुशखबरी?

महातमा ने कहा, जो पचास गाड़ी रूई उस राजा ने रजाइयाँ भरने के लिए भेजी थीं रास्ते में जब उन्होंने एक जगह पर पड़ाव किया तो वहाँ पर वे पास में ही खाना बनाने लग पड़े और आज की एक चिंगारी उस रूई पर पड़ गई, फलस्वरूप वह सारी रूई देखते ही देखते जलकर राख हो गई है।

अब उस राजा को और अन्य किसी जगह से रूई भी नहीं मिल पा रही है। हम उस राजा के पास गए हुए थे, उन्होंने हमसे कहा है कि उस धुनिया को कह दो कि अब हमने न तो रूई की धुनाई करवानी है और न ही नई रजाइयाँ भरवानी हैं।

जब यह बात उस महात्मा ने उस धुनिया को कही तो उसकी साधारण सोच अथवा दिमाग की पूर्व स्थिति पुनः लौट आई। इसे अध्यास कहते हैं।

इसी प्रकार का अध्यास हमारा भी पक चुका है। हम लोग अहंभाव की स्थिति में दृढ़ हो चुके हैं तथा हमने स्वयं को वाहिगुरू जी से पृथक कर लिया है। दूसरी तरफ अब हमें वाहिगुरू जी समझा रहे हैं कि ऐ भद्रपुरुष! यह तो अकालपुरुष का एक खेल ही हो रहा है। तुम उससे अलग कोई नहीं बल्कि वाहिगुरू ही निवास कर रहा है। बस तुम

इस बात को समझने का प्रयास करो। गुरू जी फुरमान करते हैं कि -

धारना - बुझ बंदिआ, अंदर कौण तेरे वसदा।

ना इहु मानसु ना इहु देउ ॥
ना इहु जती कहावै सेउ ॥
ना इहु जोगी ना अवधूता ॥
ना इसु माइ न काहू पूता ॥
इआ मंदर महि कौन बसाई ॥
ता का अंतु न कोउ पाई ॥ ***अंग - 871***

गुरू जी कहते हैं कि जो तुम्हारे अन्दर निवास कर रहा है, न तो यह मनुष्य है और न ही देवता है। तुम इसे बताओ कि इसके अन्दर कौन निवास कर रहा है? इसके अन्दर तो वह निवास करता है जिसका रहस्य तो ब्रह्मा या महेश भी नहीं जानते हैं -

धारना - ब्रहमा बिशन ना अंत जिहदा जाणदे,
देही अंदर उह वसदा।

इआ मंदर महि कौन बसाई ॥
ता का अंतु न कोउ पाई ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
ना इहु गिरही ना ओदासी ॥
ना इहु राज न भीख मंगासी ॥
ना इसु पिंडु न रकतू राती ॥
ना इहु ब्रहमनु ना इहु खाती ॥ 2 ॥
ना इहु तपा कहावै सेखु ॥
ना इहु जीवै न मरता देखु ॥
इसु मरते कउ जे कोउ रोवै ॥
जो रोवै सोई पति खोवै ॥ 3 ॥
गुर प्रसादि मै डगरो पाइआ ॥
जीवन मरनु दोउ मिटवाइआ ॥
कहु कबीर इहु राम की अंसु ॥
जस कागद पर मिटै न मंसु ॥ ***अंग - 871***

वे कहने लगे, प्रेमीपुरुष! इस शरीर के अन्दर कोई भी अन्य नहीं निवास कर रहा है क्योंकि इसके अन्दर तो वाहिगुरू स्वयं ही था। कोई दूसरी चीज तो यहाँ पर कोई है ही नहीं। जड़ भी वही है तथा चेतन भी वही है। जिस समय जड़ और चेतन का भेद मिट जाएगा, उस समय तुम्हें यह बात समझ में आ जाएगी लेकिन केवल बुद्धि के द्वारा तुम्हें इसका ज्ञान नहीं हो पाएगा।

श्री कृष्ण महाराज जी यही बात अर्जुन जी को समझाते हुए फुरमान करते हैं कि हे अर्जुन! मृत्युलोक के अन्दर जो ये जीव हैं, ये सब मेरा ही अंश हैं और ये सब अनादिकाल से चले आ रहे हैं। जो हमारे ये छः प्रकार की इन्द्रियाँ हैं, इन्हें प्रकृति अपनी तरफ खींचती चली जा रही है और इन्हीं के प्रभाव के कारण जो चेतनता है, वह जन्म लेती रहती है, मरती रहती है। यह जीवात्मा जो है यह बुद्धि के वश में हैं, बुद्धि मन के वश में है, मन इन्द्रियों के वश में है, इन्द्रियाँ भोगों के वश में हैं। इस प्रकार से हम बहुत नीचे उतर आते हैं। हमारे जो भोग हैं, वे ही हमारे संस्कार बन जाते हैं, कर्म बन जाते हैं। यही जो कर्मबन्धन हैं, इन्हीं के चक्रव्यूह में फँस कर हम जन्म लेते रहते हैं, मरते रहते हैं। यह सारा झगड़ा वास्तव में हउमै के कारण ही शुरू होता है -

धारना - जंमदा ते मरदा है,
हउमै दा बंनिआ होइआ।

कहने लगे, भाई जमाल जी! यह जो अहंभाव का तत्व बीच में आ गया है, गुरू जी इसे हउमै कहते हैं, इसी तत्व के कारण यह मनुष्य जन्म व मरण के चक्र में फँसा रहता है। जब वह अपना पृथक अस्तित्व समझने लगता है, तो फिर उसके दुखों की समाप्ति हो ही नहीं पाती है। दूसरी बात मन की है, यह जो हमारा मन है, यह तो बिल्कुल अन्धा हो चुका है, इसके अन्धे होने का कारण यह है कि इसके ऊपर जन्म-जन्मान्तरों की मैल पड़ी हुई है -

जनम जनम की इसु मन कउ मलु लागी
काला होआ सिआहु ॥
खंनली धोती उजली न होवई जे सउ धोवणि पाहु ॥
अंग - 651

मैल के कारण यह इतना काला हो गया है कि अब इसे अपना स्वरूप भी दिखाई नहीं पड़ता है। यह बिल्कुल ही अन्धा हो चुका है।

जमाल कहने लगा, महाराज जी! यह मैल किस प्रकार से दूर हो सकती है?

गुरू जी बताने लगे कि यह जो मन की मैल है, यह परमात्मा की कृपा और साधू की संगत के बिना दूर नहीं हो पाती है। यदि साधू की संगत प्राप्त हो जाए तो फिर हमारा मन, जीवात्मा के वश में आ जाता है, अन्यथा जीवात्मा, बुद्धि के वश में ही रहती है। बुद्धि को मन ने और मन ने इन्द्रियों को अपने वश में किया हुआ है। इस प्रकार उल्टा चक्र चलेगा तो फिर इस शरीर का जो वास्तविक मालिक है (जीवात्मा) वह फिर मन को भी चेतावनी देता है -

पर त्रिअ रुपु न पेखै नेत्र ॥ ***अंग - 274***

करन न सुनै काहू की निंदा ॥ ***अंग - 274***

जब मन, जीवात्मा के वश में आ गया तो फिर वह कानों को गलत बातें सुनने ही नहीं देता है, हाथों को बुरा कार्य नहीं करने देता, पैरों को बुरी जगह जाने नहीं देता है। इसका कारण यह है कि अब घर का असली स्वामी जाग पड़ा है और उसने मन को अपने नियन्त्रण में कर लिया है।

अतः महाराज जी कहते हैं कि जब तक मन, जीवात्मा के वश में नहीं आता है, तब तक बात नहीं बन पाती है। दरअस्ल यह मन अत्यन्त मैला हो चुका है और यह मन न तो तीर्थों पर जाकर ही साफ हो पाता है और अन्य किन्हीं विधियों के द्वारा ही साफ हो सकता है। तीर्थों पर जाकर स्नानादि करने से इसके अहंकार रूपी मन की मैल कैसे दूर हो सकती है -

मन कामना तीरथ देह छुटै ॥
गरबु गुमानु न मन ते हुटै ॥
सोच करै दिनसु अरु राति ॥
मन की मैलु न तन ते जाति ॥ *अंग - 265*

चाहे यह दिन-रात तीर्थों पर स्नानादि करता रहे -

इसु देही कउ बहु साधना करै ॥
मन ते कबहू न बिखिआ टरै ॥ *अंग - 265*

गुरू जी कहते हैं कि प्रेमीपुरुष! यदि तुम वास्तव में ही इसकी मैल को उतारना चाहते हो तो फिर हम तुम्हें इसकी विधि बतला देते हैं -

धारना - मैल लहि जाँदी है,
प्रभ जी दा सिमरन करके।

गुरू जी कहने लगे कि यदि तुम वाहिगुरू जी को सदैव याद रखो तो फिर वह परम निर्मल है। जब निर्मल का श्रोत इसके अन्दर पड़ना शुरू हो जाता है। जिस प्रकार से एक नल के नीचे एक मैले जल से भरी हुई बाल्टी रख दो और ऊपर से साफ पानी वाले नल को खोल दो तो धीरे-धीरे उस मैले जल की बाल्टी में साफ जल पड़ता जाएगा फलस्वरूप मैला जल बाहर निकलता चला जाएगा। आपकी किसी पानी की हौद में मैला जल भरा हुआ है। वहाँ पर स्थित ट्यूबवैल को चलाने वाली मोटर के स्विच को आन कर दो तो मैला पानी बाहर निकल जाएगा और वह हौद निर्मल पानी से भर जाएगी। इसी प्रकार से जब हम वाहिगुरू को याद करते हैं, उसे प्यार करते हैं तो फिर वाहिगुरू जी की समझ व उसका ज्ञान हमारे हृदय मे समाता चला जाएगा और मैले संस्कार शनैः शनैः बाहर निकलना शुरू हो जाएँगे -

प्रभ कै सिमरनि मन की मलु जाइ ॥
अंम्रित नामु रिद माहि समाइ ॥ *अंग - 263*

उस समय अमृत नाम ने मन में बसना है, जब तक मन मैला है, तब तक वह मैल को दूर करता रहता है। यथा -

भरीऐ मति पापा कै संगि ॥
ओहु धोपै नावै कै रंगि ॥ *अंग - 4*

इस प्रकार से जो बुद्धि है, यह सतोगुणी अंश है, जिसे कि हम अक्ल कहते हैं, मन कहते हैं, चित्त कहते हैं, अहंभाव कहते हैं। यह सब जड़ है लेकिन जब इसके ऊपर चेतन की सत्ता पड़ती है, चेतन का प्रकाश पड़ता है, तो यह चेतन स्वरूप में हो जाती है और अपना पृथक अस्तित्व महसूस करने लगती है फलस्वरूप परमात्मा से बेमुख हो जाती है।

महाराज जी इस बात को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि बुद्धि उस वास्तविक स्थिति पर (आत्मा की स्थिति पर) नहीं पहुँच पाती है। वहाँ पर पहुँचने के लिए तो तुम्हें किसी विशेष अवस्था पर पहुँचना पड़ता है -

तिथै घड़ीअै सुरति मति मनि बुधि ॥
तिथै घड़ीअै सुरा सिधा की सुधि ॥ *अंग - 8*

सरम खण्ड (श्रम खण्ड) यह बुद्धि बदलनी शुरू हो जाती है -

कहि कबीर बुधि हरि लई मेरी
बुधि बदली सिधि पाई ॥ *अंग - 339*

वह बुद्धि अलग प्रकार की होती है, उसे आत्म विषयक बुद्धि भी कहते हैं, इसके अतिरिक्त इसके और भी कई प्रकार के नाम हैं। कोई इसे तीसरी आँख भी कहता है तथा कोई इसे छठी ज्ञानेन्द्रिय कहता है तथा गुरू जी ने इसे बिअन्न अखड़ीआं कहा है। परमात्मा का दर्शन करके वे आँखें खुल जाती हैं, उसी को महाराज जी विवेक बुद्धि कहते हैं -

बिबेक बुधि सभ जग महि
निरमल बिचरि बिचरि रसु पीजै ॥
गुर परसादि पदारथु पाइआ
सतिगुर कउ इहु मनु दीजै ॥ *अंग - 1325*

अतः इस हउमै के कारण व्यक्ति फँसता चला जाता है क्योंकि जो अन्तःकरण है इसमें हउमै के कारण यह व्यक्ति कहता है कि 'मैंने किया है' 'यदि मैं यह न करता तो सभी फँस जाते', 'मैंने दान दिया है, तभी स्कूल बन पाया है', 'मैंने दान किया है तभी गुरुद्वारा बन पाया है', 'मैंने कितना प्रचार किया है तभी सिक्खी फैली है'। गुरू जी कहते हैं प्रेमीपुरुष! ये सारी चीजें लेखे में पड़ने वाली नहीं हैं। आप जी इस प्रकार से फुरमान करते हैं -

जब इह जानै मैं किछु करता॥
जब लगु जानै मुझ ते कछु होइ ॥
तब इस कउ सुखु नाही कोइ ॥
जब इह जानै मै किछु करता ॥
तब लगु गरभ जोनि महि फिरता ॥
जब धारै कोउ बैरी मीतु ॥
तब लगु निहचलु नाही चीतु ॥
जब लगु मोह मगन संगि माइ ॥
तब लगु धरमु राइ देइ सजाइ ॥
प्रभ किरपा ते बंधन तूटै ॥

गुर प्रसादि नानक हउ छूटै ॥ *अंग - 278*

ये सब महाराज जी ने हउमै के रूप बतलाए हैं। जब इसके मन में यह ख्याल आता है कि मैं यह कर दूँ, मैं वह कर दूँ, मैं इनका भला कर दूँ, मैं इनके लिए यह बना दूँ, तो गुरू जी कहते हैं कि यह तो सब कुछ 'मैं' पर सहारा रखकर ही बात कर रहा है। गुरु दसवें महाराज जी ने पीर बुद्धुशाह को बताया था कि यहाँ पर तो सारी हुक्म की खेल हो रही है यहाँ परमात्मा के सिवाए कोई कुछ नहीं करता है। जब यह व्यक्ति कहता है कि यह कार्य मैंने किया है, मैंने स्कूल बनाया है, मैंने गुरुद्वारा बनाया है, तो यह काम तो बहुत अच्छा किया है, लेकिन जो कहता है कि मैंने किया है तो वह काम के फल के साथ बँध जाता है। फिर उसे इसके फल को भोगना पड़ेगा। चाहे वह इसके फल को बैकुण्ठ धाम में जाकर भोगे चाहे इस संसार में आकर भोगे, उसे भोगना ही पड़ेगा क्योंकि वह इसके फल के साथ बँध गया है।

जब तक यह व्यक्ति सोचता है कि अमुक व्यक्ति मेरा वैरी है, अमुक मित्र है, अमुक मेरा हितैषी है और अमुक मुझे हानि पहुँचाने वाला है, महाराज जी कहते हैं 'तब लगु निहचलु नाही चीतु।।' यानि अभी उसे ज्ञान नहीं हो सका है, अभी तो वह 'दो' में चल रहा है और जब तक 'दो' के बीच है, तब तक यह जन्म लेता रहेगा और मरता रहेगा। 'जब लग मोह मगन संगि माहि।।' जब तक मोह में मगन है, चाहे वह धन का मोह है, चाहे परिवार का मोह है, चाहे बच्चों का मोह है, चाहे अपनी कोठियों का मोह है, चाहे अपने साथियों का मोह है, गुरू जी कहते हैं कि 'तब लगु धरमु राइ देहि सजाइ।।' यानि कि तब तक तुम इन कर्मों का फल भोगने के लिए भी तैयार रहो क्योंकि कर्म तो अच्छे भी होते हैं और बुरे भी होते हैं। इनके फलों से छुटकारा पाने का तो एक ही तरीका है कि -

जब लगु मोह मगन संगि माइ ॥

यदि गुरू की कृपा हो जाए तो ही यह हउमै दूर हो पाती है। सवाल उत्पन्न होता है कि यह (हउमै) उत्पन्न कहाँ से होती है? गुरू जी कहते हैं -

हउमै किथहु उपजै कितु संजमि इह जाइ ॥

अंग - 466

गुरू जी कहते हैं कि यह हुक्म में ही उत्पन्न हुई है -

हउमै एहो हुकमु है पइअै किरति फिराहि ॥
हउमै दीरघ रोगु है दारु भी इसु माहि ॥

अंग - 466

लेकिन इसके अन्दर गुरू जी ने दवाई भी रखी हुई है। कौन सी दवाई है? गुरू जी कहते हैं कि -

किरपा करे जे आपणी ता गुर का सबदु कमाहि ॥
नानकु कहै सुणहु जनहु इतु संजमि दुख जाहि ॥

अंग - 466

अत: हउमै दोनों प्रकार की होती है, मोटी हउमै को तो हम सभी जानते हैं लेकिन सूक्ष्म हउमै भी होती है जैसे कि मैं इतना भजन करता हूँ, मैं इतने बजे उठता हूँ आदि। भजन बन्दगी करनी, तप करना, सेवा करनी, कुर्बानी का अहंभाव लाना, यह सब हउमै के ही रूप हैं। स्थूल हउमै होती है, राजभाग की, यौवन की, सुन्दरता की, विद्या की, कला-कौशल की, कुल की, जाति की आदि। ये सब जो हउमै के रूप हैं, ये सब समाप्त ही नहीं हो पाते हैं। अत: हउमै के अन्दर यह जीव फँसा हुआ है और इसके विभिन्न रूप हैं, जिन्हें कि महाराज जी ने खोल-खोल कर बतलाया है। इस प्रकार से पढ़ लो -

धारना - समझ लै मनाँ, ओ वृखो वृख रुप हउमै दे।

जिस कै अंतरि राज अभिमानु ॥
सो नरकपाती होवत सुआनु ॥ *अंग - 278*

गुरू जी हमें हउमै के पृथक-पृथक रूप बतलाते हैं। राजभाग के अभिमान में कुत्ता बन जाता है। राजभाग का अभिमान चाहे कोई राजनैतिक अफसर है, चाहे कोई राजनैतिक कर्मचारी है और उसके मन में अभिमान हो कि मैं फलां हूँ, मेरे पास अमुक अधिकार हैं, फिर मालूम है कि इस हउमै ने क्या करना है? यह हउमै फिर हमें कुत्ता बना देगी और फिर वह नर्क में जाएगा -

जो जानै मै जोबनवंतु ॥
सो होवत बिसटा का जंतु ॥ *अंग - 278*

फिर कहाँ गया? स्वयं ही देख लो कि वह विष्टा का जन्तु बन गया -

आपस कउ करमवंतु कहावै ॥
जनमि मरै बहु जोनि भ्रमावै ॥
धन भूमि का जो करै गुमानु ॥ *अंग - 278*

हमें अभिमान हो जाता है कि मेरे पास इतनी जमीन है, इसकी अपेक्षा मेरी कोठियाँ अधिक हैं। मुझे तो कई लोग यही बतलाते हैं, जहाँ जाओ वे यही कहेंगे कि मेरे तो चण्डीगढ़ में इतने शाप-कम-फलैट हैं, हमारे पास तो इतनी कारें हैं, मेरे बच्चे इस प्रकार के हैं। साधु संगत जी! ये सारी बातें हउमै की हैं -

धन भूमि का जो करै गुमानु ॥
सो मूरखु अंधा अगिआनु ॥
करि किरपा जिस कै हिरदै गरीबी बसावै ॥

नानक ईहा मुकतु आगै सुखु पावै ॥ अंग - 278

धनवंता होइ करि गरबावै ॥
त्रिण समानि कछु संगि न जावै ॥
बहु लसकर मानुख उपरि करे आस ॥
पल भीतरि ता का होइ बिनास ॥
सभ ते आप जानै बलवंतु ॥
खिन महि होइ जाइ भसमंतु ॥
किसै न बदै आपि अहंकारी ॥
धरम राइ तिसु करे खुआरी ॥
गुर प्रसादि जा का मिटै अभिमानु ॥
सो जनु नानक दरगह परवानु ॥ 2 ॥
कोटि करम करै हउ धारे ॥
स्रमु पावै सगले बिरथारे ॥ अंग - 278

सभी प्रकार के शुभ कर्म करने के बाद, सेवा करके, दान करके, तीर्थ करके, करोड़ों कर्म करके फिर यदि कहता है कि मैंने किए हैं। उसके साथ क्या होता है? फिर तो केवल थकान ही उसके पल्ले पड़ती है -

अनिक तपसिआ करे अहंकार ॥ अंग - 278

मैंने इस प्रकार से तपस्या की, अमुक स्थान पर इतना नाम स्मरण किया, इतना भजन किया, इन बातों का अभिमान करता है कि मैंने इतना भजन किया है और इसने किया ही नहीं है। महाराज जी कहते हैं कि फिर क्या होगा-

नरक सुरग फिरि फिरि अवतार ॥ अंग - 278

कभी नर्क में जाएगा और कभी स्वर्ग में जाएगा तथा बार-बार जन्म लेता व मरता रहेगा -

अनिक जतन करि आतम नही द्रवै ॥
हरि दरगह कहु कैसे गवै ॥ अंग - 278

यदि आत्मा द्रवीभूत ही नहीं हुई यानि कि इसमें कोई फर्क ही नहीं पड़ा तो फिर दरगाह में कैसे जाओगे -

आपस कउ जो भला कहावै ॥
तिसहि भलाई निकटि न आवै ॥
सरब की रेन जा का मनु होइ ॥
कहु नानक ता की निरमल सोइ ॥ अंग - 278

गुरू जी कहने लगे, भाई जमाल! तुम्हें हमने हउमै का रूप बतलाया है, तुम्हें हमने जीव का रूप बताया है और जो जीव है, यह सत्य नहीं हुआ करता है।

भाई जमाल बोला, महाराज जी! क्या फिर मैं हूँ ही नहीं?

महाराज जी ने कहा, तुम्हारा अध्यास पक गया है, इसलिए तुम्हें अपना आप महसूस होता है। वास्तव में तो तुम हो ही नहीं। यह तो असत्य हउमै का ही प्रभाव है।

जब दिन का उदय हो जाता है तो फिर रात रहती ही नहीं है, अन्धकार तो फिर उसी समय समाप्त हो जाता है। यदि रात्रि सत्य हो तो फिर वह दिन में भी विद्यमान रहे। रात सत्य नहीं है, इसीलिए जब दिन का उदय होता है तो रात्रि समाप्त हो जाती है। ठीक इसी प्रकार से, जब सत्य का सूर्योदय हो जाता है तो फिर झूठी 'मैं' मर जाती है। फिर वहाँ पर होता क्या है। फिर वहाँ पर सत्य आकर प्रवेश कर लेता है। सच्चाई तो यह है कि सबके अन्दर परमात्मा स्वयं ही खेल कर रहा है। यहाँ पर दूसरा तो कोई है ही नहीं। सबके अन्दर एक ही परमात्मा है लेकिन इसका जो जड़ भाग है, जिसे कि अन्तःकरण कहा जाता है, ने तथाकथित जागृति आने पर 'मैं' निर्मित कर ली है और 'मैं' को बना लेने के कारण वह फँसा हुआ घूमता है और दुख-सुख को भोगता है। यदि वह 'मैं' को छोड़ दे और 'मैं' तो कुछ भी नहीं है-

मै नाही प्रभ सभु किछु तेरा ॥
ईघै निरगुन उघै सरगुन
केल करत बिचि सुआमी मेरा ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
नगर महि आपि बाहरि फुनि आपन
प्रभ मेरे को सगल बसेरा ॥
आपे ही राजनु आपे ही राइआ
कह कह ठाकुरु कह कह चेरा ॥ अंग - 827

गुरू जी कहते हैं कि अपने आप ही यह राजा बना हुआ है और अपने आप ही रंक बना हुआ है, अपने आप ही यह प्रजा बना हुआ है, अपने आप ही हाकिम बना हुआ है और जब यह बात पहचान में आ जाती है तो फिर समझ जाग जाती है -

मन मेरे जिनि अपुना भरमु गवाता ॥
तिस कै भाणै कोइ न भूला जिनि सगलो ब्रहमु पछाता॥ अंग - 610

जब सत्य की पहचान हो गई और जड़ को जड़ न समझा तथा चेतन को चेतन न समझा तो फिर दोनों को इकट्ठे ही कर दिया कि यह तो स्वयं परमात्मा ही अपने रंगों में खेल कर रहा है, यहाँ पर तो दूसरा कोई है ही नहीं। इस प्रकार से पढ़ लो -

धारना - वेख पिआरिआ! सभनाँ अंदर एको राम है।

महाराज जी कहने लगे देखो भद्रपुरुष!

निरगुनु आपि सरगुनु भी ओही ॥
कला धारि जिनि सगली मोही ॥
अपने चरित प्रभि आपि बनाए ॥
अपुनी कीमति आपे पाए ॥
हरि बिनु दूजा नाही कोइ ॥

सरब निरंतरि एको सोइ ॥
ओत पोति रविआ रुप रंग ॥ *अंग - 287*

वह इस प्रकार से कण-कण में रमा हुआ है या व्याप्त है जैसे कि कपड़ा बुना हुआ होता है लेकिन वह प्रकाश कब होता है -

भए प्रगास साध कै संग ॥ *अंग - 287*

यदि कोई 'पूरा' मिल जाए तो उसकी संगत के द्वारा उसका प्रकाश होता है, अन्यथा हउमै का जो काला बादल है, वह उसे ढक कर रखता है -

रचि रचना अपनी कल धारी ॥
अनिक बार नानक बलिहारी ॥ *अंग - 287*

जब सारी बातें गुरू जी ने समझा दीं तो समझने के बाद भाई जमाल कहने लगा, महाराज जी! एक शंका रह गई -

महाराज जी बोले, वह भी बताओ -

महाराज जी! जब सबके अन्दर एक ही वाहिगुरू है तो फिर एक के दुखी होने के सारे ही दुखी होने चाहिए? क्योंकि वह तो एक ही है और यदि एक की भूख मिट जाए तो फिर सबकी तृप्ति हो जानी चाहिए? यदि एक के अन्दर ज्ञान आ जाए तो फिर सबके अन्दर ही प्रकाश हो जाना चाहिए?

महाराज जी बोले, देखो! बन्धु! आकाश जो है वह सर्वत्र परिपूर्ण है न?

वह बोला, हाँ, महाराज जी!

आगे गुरू जी ने फुरमाया कि सभी बर्तनों के अन्दर आकाश है, आकाश, space या खाली जगह को कहते हैं। कोठी के अन्दर भी प्रकाश है और सभी कोठियों के अन्दर प्रकाश है लेकिन जिस कोठी के अन्दर कोई व्यक्ति बिजली के स्विच को ऑन करेगा, प्रकाश वहीं पर तो आएगा, न कि सभी के अन्दर आ जाएगा। परमात्मा तो सर्वत्र है, लेकिन जिस शरीर में उसने प्रकट होना है, वहीं पर होना है, सबके अन्दर वह नहीं होता है। इसी प्रकार से तारों (नक्षत्रों) की परछाई तो सभी प्रकार के जल में पड़ती है और वहाँ पर वे तारे दिखाई पड़ते हैं लेकिन वास्तव में वह तारे अलग ही रहते हैं। ठीक इसी प्रकार से निर्गुण ब्रह्म सब कुछ होते हुए भी सबसे पृथक ही रहता है। वैसे वह सबके अन्दर विद्यमान है -

काहे रे बन खोजन जाई ॥
सरब निवासी सदा अलेपा तोही संगि समाई ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
पुहप मधि जिउ बासु बसतु है मुकर माहि जैसे छाई॥
तैसे ही हरि बसे निरंतरि घट ही खोजहु भाई ॥1॥
बाहरि भीतरि एको जानहु इहु गुर गिआनु बताई ॥
अंग - 687

उसे अन्दर भी देखो लेकिन वह बाहर भी है -

जन नानक बिनु आपा चीनै
मिटै न भ्रम की काई ॥ *अंग - 678*

अब बात यहाँ पर आकर समाप्त हो गई कि जब तक आत्म साक्षात्कार नहीं करता है और जब तक भ्रम की मैल दूर नहीं होती है, तब तक हउमै का नाश नहीं होता है।

उस समय भाई जमाल ने विनती की कि महाराज जी! आपने बहुत ही सुन्दर ढंग से समझाया है तथा आपकी गुरवाणी को पढ़कर व विचार कर बहुत कुछ समझ में आ गया है।

महाराज जी कहने लगे, भाई जमाल! हमने यही तो कहा था कि गुरवाणी को पढ़ने में ही भेद है, गुरवाणी को सुनने में भी भेद है, गुरवाणी को मानने में भी भेद है और उसकी कमाई करने में भी भेद है। तुमने अब वाणी को सुना है, सुनकर माना है, अब तुम इसकी कमाई करके अपने जीवन मनोरथ को हासिल कर लो।

साधु संगत जी! यदि हम लोग भी गुरवाणी को सुन लें क्योंकि यह तो वैसे भी बहुत सरल है और सुनकर मान लें तो हमारा भी उद्धार हो सकता है। गुरवाणी को अपने जीवन में ढालने के बाद भाई जमाल कितना बड़ा सिक्ख हुआ है। गुरू इतिहास में उसका नाम आता है। दरअस्ल इतिहास में उन्हीं गुरसिक्खों का नाम आता है जो कि पूर्ण पदवी को पहुँचे हुए गुरसिक्ख थे यानि कि जो ब्रह्म ज्ञान की अवस्था को प्राप्त कर चुके थे। जिनके अन्दर -

आतम रस जिह जानही, सो है खालस देव॥
प्रभ महि, मो महि, तास महि, रंचक नाहन भेव॥
(सरब लोह ग्रंथ 'चौं)

उनका और गुरू का भेद समाप्त हो चुका था क्योंकि उनकी ज्योति गुरू की ज्योति के साथ मिलकर एकरूप हो चुकी थी, इस प्रकार के गुरसिक्खों का नाम ही इतिहास में दर्ज हो पाता है।

इस प्रकार भाई जमाल कहने लगा, महाराज जी! निःशंक रूप से मैं सारी बात समझ चुका हूँ लेकिन मुझे अब कोई ऐसी युक्ति बतलाने की कृपा करें जिसके द्वारा मैं गुरवाणी की कमाई कर सकूँ क्योंकि गुरवाणी की कमाई कर पाना कोई सरल कार्य तो है नहीं। महाराज जी कहने लगे, प्रेमीपुरुष! वह युक्ति है - सिमरन। सिमरन कहते याद

को। तुम उसका सिमरन करो, उसका नाम हम लोगों ने रखा हुआ है - 'वाहिगुरू'। यह नाम गुरू नानक पातशाह जी ने हमें प्रदान किया है। जब हम 'वाहिगुरू' शब्द कहते हैं तो वह ज्योति खण्डों व ब्रह्मांडों में परिपूर्ण है -

जिमी जमान के बिखै सम्सति एक जोत है॥
ना घाट है न बाढ है ना घाटि बाढि होत है॥

अकाल उसतति

जब तुम्हारा ध्यान इसके अन्दर परिपक्व होने लग पड़ेगा और संसार की तरफ से पीछे हटने लग जाएगा तो फिर तुम्हारी वाहिगुरू की याद बढ़ती चली जाएगी तथा संसार का अध्यास कम होता चला जाएगा। जिस समय यह याद चौबीस घंटों की बन जाएगी और अवस्था ऐसी बन जाएगी जैसी कि गुरू महाराज जी ने बतलाई है। प्यारपूर्वक इस प्रकार से पढ़ लो -

धारना - नहीओं जींवदी, मृछी नीर तों बिनाँ।

जिउ मछुली बिनु पाणीअै किउ जीवणु पावै ॥
बूंद विहूणा चात्रिको किउ करि त्रिपतावै ॥
नाद कुरंकहि बेधिआ सनमुख उठि धावै ॥
भवरु लोभी कुसम बासु का मिलि आपु बंधावै ॥
तिउ संत जना हरि प्रीति है देखि दरसु अघावै ॥

अंग - 708

गुरू जी कहने लगे, भाई जमाल! इसका इलाज यही है कि उधर वाला अध्यास घटाना शुरू कर दो और इधर वाला बढ़ाना शुरू कर दो। ऐसा सिमरन के द्वारा ही सम्भव हो पाएगा। ज्यों-ज्यों सिमरन बढ़ता जाएगा त्यों-त्यों परमात्मा की याद, सत्य की याद पकती जाएगी, फलस्वरूप झूठ की रात समाप्त हो जाएगी। अन्त में जब सुरति ने झूठ में से उठकर हउमै में से उठकर सत्य के साथ जुड़ जाना है तो उस समय एक पुल निर्मित हो जाएगा। उस समय उधर प्रकाश हो जाएगा और इधर झूठी मैं मर जाएगी। इसका परिणाम यह होगा कि सत्य की प्राप्ति हो जाएगी। इसका उपाय यही है कि बस सिमरन में जुट जाओ -

वाहिगुरु गुरमंत्र है जपि हउमै खोई।

भाई गुरदास जी, वार 13/2

इसका जप करो, नाम जपने से हउमै का नाश हो जाएगा। वैसे यह हउमै अन्य किसी भी तरह से दूर नहीं हो पाती है, न तो यह पढ़ने से दूर हो पाती है, न ही यह विचार करने से समाप्त हो पाती है। नाम सिमरन के अतिरिक्त हउमै को दूर करने का अन्य कोई भी साधन नहीं है। अतः तुम सावधान होकर नाम का सिमरन करने लग जाओ। अब वह गुरू जी बिल्कुल सामने होकर बैठ गया। गुरू जी ने कृपा करके उसके सिर पर अपना हाथ रख दिया, साथ ही आपने हुक्म कर दिया कि भाई जमाल! कहो वाहिगुरू! कहो वाहिगुरू! गुरू जी ने तीन बार वाहिगुरू कहलवा कर हउमै का नाश कर दिया। इसके बाद उस सिक्ख ने नाम वाणी की खूब कमाई की। इस प्रकार से यदि हम भी पहले गुरवाणी को पढ़ें, फिर उसके अर्थों की विचार करें, उसके बाद उसके भाव को समझें। इसके बाद हम उसे मान लें। आदमी भाव में तो चले जाता है, लेकिन मानता नहीं है। अब वह मानेगा कैसे? क्योंकि गुरवाणी में तो बहुत सारी बातें होती हैं। अतः गुरवाणी को धीरे-धीरे मानना शुरू करो, मानने के बाद उसकी कमाई करो क्योंकि केवल मान लेने भर से ही हमारा कल्याण नहीं हो सकेगा। मानने के बाद उसकी कमाई करनी है यानि कि जीवन में उसे ढालना है। इसके बाद ही वांछित परिणाम सामने आ पाएँगे। इस प्रकार से जब हम गुरवाणी के अनुसार अपने जीवन को ढालेंगे तो जिस प्रकार से उस गुरसिक्ख (भाई जमाल) का उद्धार हुआ है और जिसकी बदौलत हमें भी बहुत सारी बातों का ज्ञान हुआ है, उसी प्रकार से हमारा भी उद्धार हो सकता है। अब समय अनुमति प्रदान नहीं कर रहा है, इसलिए अब यहीं पर समाप्ति है।

आवश्यक निवेदन

रिन्युवल का चन्दा भेजने के लिए मेंबरशिप नम्बर (सदस्यता संख्या) तथा रिन्युवल तारीख (पुनर्नवीनीकरण तिथि) का व्यौरा अवश्य दिया जाए तथा यह भी बतलाया जाए कि चन्दा, रिन्युवल के लिए है अथवा नई मेंबरशिप प्राप्त करने के लिए प्रेषित किया गया है।

यदि किसी प्रेमी पुरुष ने आत्म मार्ग मैगजीन के लिए चन्दा जमा करवाया हो और उसे मैगजीन न पहुँच पा रहा हो, तो उसे जमा करवाई गई रकम का रसीद नम्बर आदि लिखकर आत्म मार्ग कार्यालय से सम्पर्क करना चाहिए।

'आत्म मार्ग' एक धार्मिक मैगजीन है, इसके अन्तर्गत श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की वाणी छपी हुई होती है, इसलिए समस्त पाठक बन्धुओं से अनुरोध है कि कृप्या इसका प्रयोग रद्दी पेपर की भांति न किया जाए। यदि आप पुराने मैगजीन को रखना नहीं चाहते हैं तो उन्हें हमारे किसी भी वितरण केन्द्र पर सहर्ष वापिस कर सकते हैं।

बाबाणियाँ कहानियाँ

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक फरवरी, अंग - 16)

चौथी प्रकार की माया वाहिगुरू जी ने संसार की रचना करते समय एक खेल करने के लिए अपनी ही माया शक्ति का प्रसार किया। वाहिगुरू जी में इतनी शक्तियाँ हैं, कोई भी दुनियाँ में उसकी थाह नहीं पा सकता। उन्हीं में से ही एक माया शक्ति है जिसकी रचना प्रभु ने स्वंय ही की, कई चिन्तकों का यह मत है कि संसार में दो तत्व हैं - एक में से दुख परेशानियाँ, बेचैनी पैदा होती है, वह जड़ तत्व है। जो तीन गुणों - रजो, तमो, सतो गुण के रूपों में होता हुआ संसार रचता है, यह प्राकृतिक तत्व परिवर्तनशील है, क्षण भंगुर है, रूप बदलता है, एक रस नहीं रहता। सभी दुखों का मूल कारण यह जड़ तत्व माया है। दूसरे में से शान्ति रस और परमानन्द की वर्षा हर समय बरसती रहती है। उनका भी इसलिये यह मत है कि वाहिगुरू जी सत, चित्त, आनन्द तथा प्रिय है। 'सत' अस्तित्व को कहा जाता है जिसका कभी भी अभाव न हो। भूत, भविष्यत, वर्तमान से पहले तथा बाद में उसका अस्तित्व सदीवी रहे जिसमें से न कुछ कम होता हो, न कुछ बढ़ता हो जिसके बारे में गुरू दशमेश पिता जी ने संकेत देते हुए फ़रमान किया है -

जिमी जमान कै बिखै
समसत एक जोत है॥
न घाट है न बाढ है
न घाट बाढ होत है॥
न हानि है न बानि है
समान रूप जानीऐ॥
मकीन औ मकान
अप्रमान तेज मानीऐ॥ *अकाल उस्तति*

इस 'सत' की व्याख्या करते हुए गुरू दशमेश पिता जी फरमाते हैं-

न देह है न गेह है
न जात है न पात है।
न मंत्र है न मित्र है
न तात है न मात है।
न अंग है न रंग है
न संग है न साथ है।
न दोख है न दाग है
न द्वैख है न देह है॥ *अकाल उस्तति*

सो यह हस्ती है जिसके रूप रेख के बारे में कुछ भी नहीं कहा जा सकता। उसके रहने की कोई एक जगह नहीं है, उसका कोई नाम नहीं है, किस नाम से उसे पुकारा जाए, उसके बारे में कोई बता ही नहीं सकता क्योंकि उसका अस्तित्व सदीवी है, हम केवल इतना ही जान सकते हैं कि वह संसार में 'सत' हस्ती है। हमारे अनुभव में आने वाली बात इतनी ही है कि हम उसके अस्तित्व को अनुभव कर नहीं सकते -

नही जान जाई कछू रूप रेखं।
कहा बास तांको फिरै कउन भेखं।
कहा नाम ताको कहा कै कहावै।
कहा मै बखानो कहे मो न आवै॥ अकाल उस्तति

वह आप ही आप है, जो कुछ भी नज़र आता है वह सभी स्वंय ही होकर पसर रहा है जब अद्वैत का निश्चय पूरी तरह से परिपक्व हो जाता है उसे अक्षरों का रूप देते हुए गुरू दशमेश पिता जी इस प्रकार फ़रमान करते हैं -

कहूँ ब्रहम बाद कहूँ बिदिआ के बिखाद
कहूँ नाद को न नाद कहूँ पूरन भगत हो॥
कहूँ बेद रीत कहूँ बिदिआ की प्रतीत
कहूँ नीत अउ अनीत कहूँ ज्वाला सी जगत हो॥
पूरन प्रताप कहूँ इकाती को जाप कहूँ
ताप को अताप कहूँ जोग ते डिगत हो॥
कहूँ बरदेत कहूँ छल से छिनाइ लेत
सरब काल सरब ठउर एक से लगत हो॥
अकाल उस्तति

सो इस पारब्रह्म हस्ती को 'सत' ही कह सकते हैं। 'सत'

(**truth**) नहीं हुआ करता। सच्चाई मनुष्य के स्वभाव का एक गुण हुआ करती है पर यह 'सत' सदीवी अस्तित्व को दर्शाता है। इस अस्तित्व के बारे में कोई भी कुछ भी नहीं कह सकता, सिर्फ 'हैं' ही कह सकता है। गुरू महाराज जी ने फ़रमान किया है कि इस 'सत' के अलग अलग अनुभव होने वाले रूप नज़र आते हुए भी कोई परिवर्तन नहीं होता। सगुण भी वही है जिसे हम ओंकार कहते हैं, निर्गुण भी वही है, निरंकार भी वही है तथा सुन्न समाधि भी वही है। अपने आप ही अपने पसारे को देखने वाला है। आप ही प्रसार करके अनेक रूप होता हुआ अपने आप को देखता है गुरू महाराज जी का फ़रमान है -

सरगुन निरगुन निरंकार
सुंन समाधी आपि।
आपन कीआ नानका
आपे ही फिरि जापि॥ *अंग - 290*

इस 'सत' ने अपना प्रसार आप ही किया है सुखमनी साहिब में बहुत विस्तार पूर्वक फरमाया है कि प्रत्येक स्थान पर पारब्रह्म ही है, जहाँ पसारा पसार कर अनेक रूप धारण करता है जैसे जैसे शरीर में उसकी चेतन शक्ति कार्य करती है वैसा ही उसे कहा जाता है क्योंकि देवता के शरीर में वही चेतन शक्ति देवता कहलाती है। मनुष्य के शरीर में वही चेतन शक्ति मनुष्य कहलाती है, स्त्री कहलाती है। पशुओं में पशुओं की जाति के अनुसार नाम पड़ जाता है जैसे कि शेर, हाथी, बैल, भैंस आदि। जो उसे अच्छा लगता है वही होता है, वही हो रहा है, वही होगा, यहाँ किसी में ताकत नहीं कि उसके कार्यों में दखल दे सके।

इस का बलु नाही इसु हाथ।
करन करावन सरब को नाथ।
आगिआकारी बपुरा जीउ।
जो तिसु भावै सोई फुनि थीउ। *अंग - 277*

वह स्वंय ही अपने आप में से प्रसार रूप शक्ति का प्रयोग करके फैल (पसर) जाता है जिस में माया भी उसकी अनन्त शक्तियों में से एक शक्ति है। बेअन्त **(infinity)** शक्तियाँ हैं, कोई नहीं जान सकता कि निर्गुण अवस्था में कैसे होता है, निरंकार अवस्था में कैसे होता है, सुन्न समाधि में कैसे होता है? केवल यह 'सत' ही अपने आप को आप ही जानता है। हम तो उसके प्रसार की शक्ति से अस्तित्व में आए हुए जीव हैं। उसने कैसे प्रसार किया इसके बारे में प्रसार में रूपमान हुए जीव कुछ भी नहीं कह सकते। गुरू दशमेश पिता जी फ़रमान करते हैं -

आपु आपुनी बुधि है जेती।
बरनत भिन्न भिन्न तुहि तेती।
तुमरा लखा न जाइ पसारा।
किह बिधि सजा प्रथम संसारा॥
कबयो बाच बेनती चौपई

और जपुजी साहिब में फ़रमान आता है -

थिति वारु ना जोगी जाणै
रुति माहु न कोई॥
जा करता सिरठी कउ साजे
आपे जाणै सोई॥ *अंग - 4*

सो जो कुछ भी हम मायिक जीव कह सकते हैं वह केवल इतना ही जितनी हमें सूझ (ज्ञान) प्राप्त हुई है।

अपनी माइआ आपि पसारी
आपहि देखन हारा।
नाना रूपु धरे बहुरंगी
सभ ते रहै निआरा॥ *अंग - 537*

भाई गुरदास जी अपनी वारों में फ़रमान करते हैं -

निरंकारु आकारु होइ
एकंकारु अपारु सदाइआ।
एकंकारहु सबद धुनि
ओअंकारि अकारु बणाइआ।
भाई गुरदास जी, वार 26/2

सुखमनी साहिब में फ़रमान आता है -

पारब्रहम के सगले ठाउ।
जितु जितु घरि राखै तैसा तिन नाउ।
आपे करन करावन जोगु।
प्रभ भावै सोई फुनि होगु।
पसरिओ आपि होइ अनत तरंग।
लखे न जाहि पारब्रहम के रंग।
जैसी मति देइ तैसा परगास।
पारब्रहमु करता अबिनास।
सदा सदा सदा दइआल।
सिमरि सिमरि नानक भए निहाल॥ *अंग - 275*

सो यह जीव प्रसार के बारे में कुछ भी कहने में असमर्थ है यह वाहिगुरू जी स्वंय ही जानते हैं, आप सर्व कला समरथ हैं। हमारे पास बहुत ही सीमित ज्ञान है, हमें केवल पाँच अज्ञान इन्द्रियां ही प्राप्त हुई है जो बाहर की ओर खुलती

हैं। आंखें बाहर देखती हैं, कान बाहरी आवाज़ें सुनते हैं, रसना रसों-कशों का स्वाद लेती है, नासिका सुगिन्ध और दुर्गन्धि बाहर से ही प्राप्त करती है। स्पर्श भी हम बाहर से ही अनुभव करते हैं। वाहिगुरू जी ने कृपा करके हमें पाँच ज्ञानेद्रिन्याँ भी दी हैं जो अनन्त में झाँकती हैं अनन्त में से सुनती हैं उन्हें दिव्य इन्द्रियाँ कहा जाता है जैसे कि दिव्य नेत्र इसी संसार को प्रभु का रूप समझकर देखते हैं। दिव्य श्रवण इसी संसार के शोर शराबे में से अखण्ड नाम धुनि सुनते हैं -

जो बोलत है म्रिग मीन पंखेरू
सु बिनु हरि जापत है नही होर॥ अंग - 1265

की अवस्था मानते हैं। सबसे शिरोमनी रस जो कमल सीधा होने पर अमृत वर्षा से तर-ब-तर होने के उपरान्त हमारी दिव्य रसना को प्राप्त होता है वह दिव्य रसना ही जानती है वह भी अकह है क्योंकि संसार में और कोई वस्तु नहीं है जिसके साथ इस नाम रस की तुलना की जाए। इसी प्रकार दिव्य नासिका दिव्य सुगन्धि को हर पल हर समय अनुभव करती है। अनेक प्रकार की सुगन्धियाँ दिव्य नासिका को प्राप्त होती हैं। नाम की दिव्य झन्कारें, शरीर की दिव्य शक्ति अनुभव करती हैं। ये दिव्य होती हुई भी पूर्ण तौर पर समस्त वाहिगुरू को जानने में असमर्थ हुआ करती है क्योंकि वाहिगुरू जी अपनी महिमा आप ही जानते हैं। हमें तो केवल पाँच अज्ञान इन्द्रियाँ और दिव्य ज्ञानेन्द्रियाँ ही प्राप्त हुई हैं। यह भी वाहिगुरू जी की अपार कृपा है जिससे यह जीव संसार में अपना कार्य कर रहा है। उसके **infinity** (अनन्त) अनुभव इन्द्रियां होते हुए कोई भी इन्द्रिय नहीं है। अनन्त रसनाएं होते हुए भी कोई भी रसना नहीं है। अनन्त नेत्र होते हुए कोई भी नेत्र नहीं है। अनन्त नासिकाएं होते हुए भी कोई नासिका नहीं है। वह सभी कुछ आप ही आप है। उसके बारे में सोचा नहीं जा सकता। इतना ही कह सकते हैं कि वह सच सदा सत ही है और उसके बगैर और यहाँ पर किसी प्रकार की असत्य का कोई भी अस्तित्व नहीं है जैसे कि हमारा सिरोमनी सिद्धान्त गुरू महाराज जी ने अंकित किया है -

आदि सचु जुगादि सचु।
है भी सचु नानक होसी भी सचु॥ अंग - 1

इस ऐकंकार रूपी सत को दुनियाँ का कोई भी दर्शन शास्त्र वर्णन नहीं कर सकता और न ही इसके अनुभव में अरबों-खरबों वर्षों की चुप, कोई अनुमान लगा सकती है और न ही इसके ऊपर कोई पदार्थों की भूख, बेअन्त पदार्थ प्राप्त होकर दूर हो सकती है क्योंकि जितना हमें प्राप्त होगा उससे आगे अनन्त पदार्थ और हैं और हमारी सूझबूझ में से लाखों योग्यताएं भी उसे नहीं जान सकती। यदि कोई जीव उसके हुक्म में तथा रज़ा में अपनी हउमै को छोड़कर लीन हो जाए तो उसे सचिआर पदवी प्राप्त हो जाती है और झूठ की दीवार टूट जाया करती है और यह निर्णय लेने गया हुआ जीवन हुक्म का ज्ञान प्राप्त होते ही अपना अस्तित्व पूर्ण रूप से गँवा बैठता है और सत के रूप में ही समा जाता है, जो कि सत अवस्था है, सो इस प्रकार १ओंकार जी को सत ही कहते हैं। वह किसी समय भी असति नहीं हुआ करता। उसका दूसरा अनुभव जो हमें प्राप्त है वह यह है कि वह पूर्ण चेतन अस्तित्व है। वह मूल प्रकृति की तरह जड़ नहीं है। उसे अपनी रचना करने के लिए किसी जड़ तत्व की जरूरत नहीं है। कई विद्वान इस बात पर विश्वास रखते हैं कि जैसे कुम्हार ने बर्तन बनाने होते हैं तो उसे यह कार्य करने के लिए बढ़िया मिट्टी की जरूरत होती है, उसे घुमाने वाले चक्के की जरूरत होती है, चक्के की चाल को सीमित रखने तथा रोकने के लिये डण्डे की जरूरत होती है और बर्तनों को आकार देने के लिए तकनीक **Technology** की आवश्यकता है। वाहिगुरू जी को किसी और वस्तु की बिल्कुल भी जरूरत नहीं है, वह स्वंय ही कारण कर्त्ता है। वह स्वंय ही समरथ है। एक शब्द से सारी उत्पत्ति उसके हुक्म में आप ही हो जाया करती है। इस बारे में महाराज जी ने फ़रमान किया है -

कीता पसाउ एको कवाउ।
तिस ते होए लख दरीआउ॥ अंग - 3

हम जितने भी जीव हैं हमारा वास्ता केवल एक परम शक्ति से पड़ता है, जिसे माया कहा जाता है। माया मूल प्रकृति नहीं है क्योंकि प्रकृति में पाँच तन मात्राएं शब्द स्पर्श, रूप, रस, गन्ध तथा अहमभाव के बाद प्रसार चलता है। इन पाँच तन मात्राओं से पाँच तत्वों का प्रसार शब्द से आकाश, स्पर्श से हवा, रूप से तेज रस से पानी, गन्ध से मिट्टी पैदा होकर पाँच तत्वों से शरीर बनते हैं। 25 प्रकृतियों से ज्ञानेन्द्रियों की उत्पत्ति होती है तथा अहमभाव से अन्तसकरण 'मैं' में चेतना शक्ति बुद्धि तथा मन अस्तित्व में आते हैं। कुछ विद्वानों का मत है कि मूल प्रकृति भी उसी प्रकार है जैसे वाहिगुरू जी का अनादि अस्तित्व है। वह इसलिए कहते हैं कि चेतन तत्व (वाहिगुरू) में तो सत-चित्त-आनन्द का पूर्ण अस्तित्व है इसके विपरीत प्रकृति जड़ रूप है, दुख रूप है, क्षण भंगुर है, प्रतिपल परिवर्तनशील है, सत में दुख का

नामोनिशां भी नहीं होता प्रकृति में सुख का नामों निशां नहीं होता, वह दुख रूप होने के कारण सभी में घटित हो रहे सभी दुख इस मूल प्रकृति के अंश हैं। यह एक सिद्धान्त हैं जिसके बारे में गुरू नानक पातशाह के साथ सिद्धों ने चर्चा करते हुए संक्षेप रूप में यह बात पूछी कि -

कितु कितु बिधि जगु उपजै पुरखा
कितु कितु दुखि बिनसि जाई। *अंग - 946*

गुरू महाराज जी ने फ़रमान किया कि यह जगत तीनों कालों में हुआ ही नहीं और कभी भी अर्थात किसी काल में भी निरंकार से अलग हस्ती भासित नहीं हुआ। यह केवल हउमै तत्व (अहमभाव) जो माया का ही रूप है उसी की वजह से घटित हो रहा प्रतीत होता है क्योंकि जीव अपनी सत अवस्था से नीचे लुढ़कता हुआ आनन्दमयी कोश, विज्ञानमयी कोश, मनोमय कोश, प्राणमय कोश, अन्नमय कोश की सबसे निम्न अवस्था पर आकर टिक गया। यह सारा हउमै का करिश्मा है जिसमें से दुख उत्पन्न होता हुआ प्रतीत होता है। इसका कारण वाहिगुरू जी की परम परिपूर्ण अवस्था जिसके ज्ञान (सूझ) को हम 'नाम' कहते हैं उसे भूलकर यह अनुभव हुआ है, पर जब यही जीव इन कोशों से ऊपर उठता हुआ नाम मण्डल (आत्म मण्डल) में उनमनी अवस्था अनुभव करके व्यवहार करेगा तो उसके लिए न ही यहाँ कोई भूला हुआ है जैसे कि -

मन मेरे जिनि अपुना भरमु गवाता।
तिस कै भाणै कोइ न भूला
जिनि सगलो ब्रहमु पछाता।। *अंग - 610*

और न ही कोई दुखी है जैसा कि फ़रमान है -

दुखु नाही सभु सुखु ही है रे
एकै एकी नेतै।
बुरा नही सभु भला ही है रे
हार नही सभ जेतै॥ *अंग - 1302*

महाराज जी ने फरमाया, ''दुख आत्म मण्डल में से फिसल कर हउमै मण्डल में प्रवेश करने के कारण है जैसा कि -

हउमै विचि जगु उपजै पुरखा
नामि विसरिऐ दुखु पाई। *अंग - 946*

'चलता'

(पृष्ठ 9 का शेष)

राम नामु संतन घरि पाइआ।
तजि अभिमानु लेहु मन मोलि।
राम नामु हिरदे महि तोलि।
लादि खेप संतह संगि चालु।
अवर तिआगि बिखिआ जंजाल।
धंनि धंनि कहै सभु कोइ।
मुख ऊजल हरि दरगह सोइ।
इहु वापारु विरला वापारै।
नानक ता कै सद बलिहारै॥ *अंग - 283*

पर हैरानी की बात है कि विरले ही ऐसे पुरुष हैं जो आवाज़-ए-हक को सुनते हैं और दरगाह के लिये पूंजी इकट्ठी करते हैं, जहाँ दुनियां की कोई वस्तु साथ नहीं जाती और न ही सांसारिक रिश्तों में से किसी की मदद पहुँचती है -

जिह मारग के गने जाहि न कोसा।
हरि का नामु ऊहा संगि तोसा।
जिह पैड़ै महा अंध गुबारा।
हरि का नामु संगि उजीआरा।
जहा पंथि तेरा को न सिञानू।
हरि का नामु तह नालि पछानू।
जह महा भइआन तपति बहु घाम।
तह हरि के नाम की तुम ऊपरि छाम।
जहा त्रिखा मन तुझु आकरखै।
तह नानक हरि हरि अम्रितु बरखै॥ *अंग - 264*

गुरू महाराज जी बताते हैं, ''प्रेमियो! अरदास करो उस दुनियां के मालिक के आगे, जिससे तुम हउमै के अधीन हुये उससे अलग हो चुके हो। हृदय से बार-बार कहो -

करि किरपा प्रभ आपणी तेरे दरसन होइ पिआस।
प्रभ तुधु बिनु दूजा को नही नानक की अरदासि॥
अंग - 134

जिसके मन में वाहिगुरू का नाम बस गया, उसको यह आषाढ़ डरावना और तपस से भरा नहीं लगता। उसके अन्दर ठंडक का निवास हो जाया करता है। मन की शान्ति इतनी बढ़ जाती है कि वह सदा आनन्द में रहता है और आषाढ़ का महीना हर प्रकार से उसको सुहावना लगने लग जाता है, जिसके अन्दर नामधुन होती है -

आसाड़ु सुहंदा तिसु लगै।
जिसु मनि हरि चरण निवास॥ *अंग - 134*

जनम मरण दुहहू महि नाही
जन परउपकारी आए।।

सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ ॥
कलि कलेस तन माहि मिटावउ ॥
सिमरउ जासु बिसुंभर एकै ॥
नामु जपत अगनत अनेकै ॥
बेद पुरान सिंम्रिति सुधाखर ॥
कीने राम नाम इक आखर ॥
किनका एक जिसु जीअ बसावै ॥
ता की महिमा गनी न आवै ॥
काँखी एकै दरस तुहारो ॥
नानक उन संगि मोहि उधारो ॥ 1 ॥
सुखमनी सुख अंम्रित प्रभ नामु ॥
भगत जना कै मनि बिस्राम ॥ ***अंग - 262***

परम सम्माननीय गुरु प्यारी साधु संगत जी! आओ ख्यालों को बाहर जाने से रोको और चित्त वृत्तियों को एकाग्र करो तथा जिह्वा की पवित्रता के लिए सारे ही उच्चारण करो जी, 'सतिनाम श्री वाहिगुरू'।

महापुरुषों ने संसार के कल्याणार्थ शरीर धारण किया -

जनम मरण दुहहू महि नाही जन परउपकारी आए॥
जीअ दानु दे भगती लाईन हरि सिउ लैनि मिलाए ॥
अंग - 749

उन्होंने अपना सर्वस्व यानि कि अपना तन, मन व धन रतवाड़ा साहिब ट्रस्ट बनाकर कौम के लेखे लगा दिया। आपने गुरमति के शाह मार्ग पर चलकर जन साधारण के लिए एक उदाहरण प्रस्तुत किया। आपने किरत की, नाम सिमरन किया और मिल-बाँट कर ग्रहण किया लेकिन आपका जो अन्तिम निशाना वह था जिस जगह पर गुरवाणी हमें पहुँचाना चाहती है यथा -

अनहद बाणी पूंजी ॥ संतन हथि राखी कूंजी ॥
अंग - 894

महापुरुषों का काम ही यह होता है जैसे कि सुखमनी साहिब की बाणी कह रही है। इसका प्रयोगात्मक ज्ञान महापुरुषों के जीवन से हो पाता है, आपने अपनी सारी जिम्मेवारियों को बाखूबी निभाया, ऐसा नहीं कि आप अपने दायित्वों से पीछे हट गए। साथ ही आपको राड़ा साहिब वाले महापुरुषों की ऐसी संगत प्राप्त हुई कि उनके प्यार में आपने अपना सारा जीवन लेखे में लगा दिया। जब आपकी, उनके साथ पहली मुलाकात ही हुई थी तो उसी समय बड़े महापुरुषों ने वचन कर दिया था कि आज एक सुहागिन का मिलाप दूसरी सुहागिन के साथ हुआ है। साथ ही उन्होंने सवाल भी कर दिया कि -

सुनहु रे तू कउनु कहा ते आइओ ॥ ***अंग - 999***

हम लोगों को भी गुरवाणी कहती है कि 'सुनहु' सुनो! तुम कौन हो और कहाँ से आए हो? फिर आगे से जवाब आता है कि -

एती न जानउ केतीक मुदति चलते खबरि न पाइओ॥
अंग - 999

राड़ा साहिब वाले महापुरुषों का यह सवाल और रतवाड़ा साहिब वाले महापुरुषों का इस प्रकार का जवाब। जब राड़ा साहिब वाले महापुरुषों ने सवाल किया तो पहले तो आप चुप कर गए और वहाँ पर संगत भी काफी बैठी हुई थी, संगत के लोग कहने लगे, बेटा जी! तुम बोलते क्यों नहीं? तुम्हें महापुरुष यही तो पूछ रहे हैं कि तुम कौन हो? आप कुछ क्षणों के बाद बोले, जी मुझे बतलाना नहीं आ रहा है। सारे लोग हँस पड़े कि इसे यह बात भी बतानी नहीं आ रही है कि तम कौन हो? तुम्हारा नाम ही तो पूछ रहे हैं?

उधर महापुरुष आन्तरिक अवस्था की बात कर रहे हैं। जब आपने तीसरी बार पूछा तो आप कहने लगे कि मुझे बतलाना नहीं आ रहा है। महापुरुषों ने पैंतालिस मिनट तक नेत्र ही नहीं खोले। जब आपने नेत्र खोले तो आपके मुखारविन्द से यह वचन निकले कि आज एक सुहागिन का मिलाप सुहागिन के साथ हुआ है। साधु संगत जी! यह कितनी बड़ी अवस्था है। लेकिन यह अवस्था महापुरुषों के बिना प्राप्त नहीं हो पाया करती है। महापुरुषों ने अपना सारा जीवन राड़ा साहिब वाले महापुरुषों को समर्पित किया हुआ था। चाहे आपने सर्विस की, सिविल में या सेना में, चाहे आपने यू.पी.

के अन्दर कृषि फार्म चलाया, बस आपने अपने आपको एक प्रबन्धक के तौर पर ही प्रस्तुत किया यानि कि आपने सदैव इस प्रकार की अवस्था में विचरण किया -

राज महि राजु जोग महि जोगी ॥
तप महि तपीसरु ग्रिहसत महि भोगी ॥
धिआइ धिआइ भगतह सुखु पाइआ ॥
नानक तिसु पुरख का किनै अंतु न पाइआ ॥
अंग - 284

सुखमनी साहिब की वाणी यह कह रही है -

इह बाणी जो जीअहु जाणै
तिसु अंतरि रवै हरि नामा ॥ *अंग - 797*

गुरवाणी को कहीं से भी पढ़ लो लेकिन -

बाणी बिरलउ बीचारसी जे को गुरमुखि होइ ॥
अंग - 935

दरअस्ल गुरवाणी तो शब्दों के बाण मार रही है। पहली ही अष्टपदी कह रही है कि तुम लोग वह कार्य करो जिसे करने के लिए आए हो -

सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ ॥
कलि कलेस तन माहि मिटावउ ॥ *अंग - 262*

अब उसका सिमरन कैसे करना है? उस प्यारे की याद में प्रतीक ध्यान में, प्यार में बैठा जाता है, अन्यथा बैठना ही नहीं आता है। इस प्रकार से जब हम उसके प्यार में बैठते हैं, उसका ध्यान धरते हैं, उसे याद करते हैं तो वह याद ही उसकी इबादत बन जाती है। फिर अपने आप ही वाहिगुरू-वाहिगुरू होने लग पड़ता है, फिर तो रस भर जाता है, जुबान पर रस आ जाता है, जिस समय हम बैखरी वाणी में बोलकर सिमरन करते हैं -

नामु कहत गोविंद का सूची भई रसना ॥
अंग - 811

यह रसना जूठी कैसे हो जाती है? यह जूठी तभी होती है, जब यह असत्य बातें बोलती है -

रे जिहबा करउ सत खंड ॥
जामि न उचरसि श्री गोबिंद ॥ *अंग - 1163*

जो जिह्वा नाम नहीं जपती है, उसके तो हमें सौ टुकड़े कर देने चाहिए।

अब हमारा तो इस बात पर विश्वास ही नहीं आ पाता है। हम तो यही सोचते रहते हैं कि यह सब कैसे हो सकता है? अगली अष्टपदी में गुरू जी बतलाते हैं कि प्रभु जी के सिमरन के द्वारा क्या नहीं हो सकता है? उसकी याद में बैठने का स्वभाव बनाओ, जब स्वभाव बन गया तो फिर यह कार्य सरल हो जाते हैं, अब जैसे हम लोग सामूहिक तौर पर संगत रूप में बैठकर नाम का अभ्यास करते हैं, गुरवाणी का फुरमान है -

इक दू जीभौ लख होहि लख होवहि लख वीस ॥
लखु लखु गेड़ा आखीअहि एकु नामु जगदीस ॥
अंग - 7

इस प्रकार जब हम महापुरुषों द्वारा बताई हुई युक्ति के अनुसार नाम सिमरन करते हैं, तो फिर प्रतीक ध्यान बन जाता है। इसके आगे फिर संपत ध्यान है। सुखमनी साहिब की वाणी आगे कहती है कि -

जिसु वखर कउ लैनि तू आइआ ॥
राम नामु संतन घरि पाइआ ॥
तजि अभिमानु लेहु मन मोलि ॥
राम नामु हिरदे महि तोलि ॥
लादि खेप संतह संगि चालु ॥
अवर तिआगि बिखिआ जंजाल ॥
धंनि धंनि कहै सभु कोइ ॥
मुख उजल हरि दरगह सोइ ॥
इहु वापारु विरला वापारै ॥
नानक ता कै सद बलिहारै ॥ *अंग - 283*

वह वस्तु कौन सी है? वह है नाम के अन्दर स्थित होना। नाम तो सबके अन्दर है -

नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु ॥
देही महि इस का बिस्रामु ॥ *अंग - 293*

यह मत सोचो कि 'नाम' कोई दूसरा व्यक्ति हमें देगा। ऐसा नहीं है, न तो कोई बाहर से 'नाम' को देता है और न ही कोई दे सकता है। नाम तो हमारे अन्दर से ही मिलता है। नाम ने तो सभी को धारण किया हुआ है -

नाम के धारे सगले जंत ॥
नाम के धारे खंड ब्रहमंड ॥ *अंग - 284*

जन साधारण को इस बात का भ्रम ही पड़ जाता है कि नाम कहीं से हमें मिलेगा। कई लोग कहीं-कहीं पर भटकते रहते हैं कि हमें नाम अमुक जगह से मिलेगा लेकिन नाम तो हमारे अन्दर ही है। बाहर से तो हमें गुरुमन्त्र मिलता है और उसकी कमाई करके हमने नाम तक पहुँचना है और उसके घर में स्थिति हो जानी है -

राम राम सभु को कहै कहिऐ रामु न होइ ॥
गुर परसादी रामु मनि वसै ता फलु पावै कोइ ॥
अंग - 491

अब कहते तो सभी हैं लेकिन गुरू की कृपा के द्वारा यदि कोई सज्जन या साधू मिल जाए तो वह युक्ति बतला

देता है कि ऐ प्रेमीपुरुष! तुम्हारा इसके द्वारा भला हो जाएगा-

गनका पापणि होइकै पापा दा गल हार परोता।

अब उसकी वृत्ति इतनी ऊँची तो थी नहीं कि उसे पहले दिन से ही विश्वास का अभ्यास बताया जाता, इसलिए महापुरुषों ने युक्ति बतला दी और युक्ति के द्वारा ही मुक्ति सम्भव है -

महाँ पुरख आचाणचक गनिका वाड़े आइ खलोता।
भाई गुरदास जी, वार 10/21

दुनिया तो कहेगी कि यह बुरा कार्य करता है क्योंकि कुकर्म करने वाले को अच्छा कौन कहेगा? लेकिन महापुरुष उस महिला की बुरी मति को देखकर भी दयालु हो गए -

दुरमति देखि दइआलु होइ हथहु उस नो दितोनु तोता। भाई गुरदास जी, वार 10/21

गनका की मनोअवस्था के अनुसार उसे एक तोता दे दिया कि तुम इसके साथ-साथ ही राम-राम कह दिया करो क्योंकि महापुरुष युक्ति बतला दिया करते हैं।

हम लोगों को क्या बतलाया है?

पाँच प्यारे अमृतपान करवाते हैं, वे गुरुमन्त्र तथा मूलमन्त्र दृढ़ करवाते हैं और साधूजन युक्ति बतलाते हैं कि इस प्रकार से कर लिया करो। बोल कर, कर लिया करो क्योंकि अभी तो तुम्हारी अवस्था शुरूआत वाली है। जिस प्रकार से प्रारम्भिक पाठशाला में छोटे बच्चे सामूहिक तौर पर ऊँची आवाज में अपने पाठ को पक्का याद करते हैं, इसी प्रकार से सन्तजनों के पास युक्तियाँ होती हैं जो कि सीने-ब-सीने चली आती हैं, वे मन की अवस्था के अनुसार बतला देते हैं। इस प्रकार से कितने बड़े-बड़े पापी लोगों का उद्धार हो गया है -

अजामलु पापी जगु जाने निमख माहि निसतारा ॥
अंग - 632

वह बहुत कुख्यात पापी था लेकिन महापुरुषों ने युक्ति के द्वारा उसे मुक्त कर दिया, वह राज पण्डित की पदवी पर बैठ कर, सभा के अन्दर अपने विचार प्रस्तुत किया करता था लेकिन कुसंगत का प्रभाव उसके ऊपर पड़ गया, उसके ऊपर माया पड़ गई।

छिअ पुत जाए वेसुआ पापा दे फल इछे लहिआ।
भाई गुरदास जी, वार 10/21

कुसंगत होने के कारण उसे राज पण्डित की पदवी से उतार दिया गया। अब उसका सम्बन्ध एक वैश्या के साथ जुड़ गया, फलस्वरूप वह उसी के साथ रहने लग पड़ा। उसका नित्य कर्म अब यह बन गया कि वह पक्षियों को मार-मार कर लाता है और उसी के द्वारा जीविकोपार्जन करता है। उसके घर में छः पुत्रों ने जन्म लिया और अब सातवें पुत्र ने जन्म लेना था। महापुरुष कहने लगे कि अब तुम इसका नाम नारायण रख लेना। अन्तिम समय पर उसे साधू का प्रतीक ध्यान आ गया। सामने वह मूरत आ गई -

सफल मूरति परसउ संतन की इहै धिआना धरना ॥
अंग - 531

अंतकाल नाराइण सुध आई जा जगति छि महि पाई।

ऐसी अवस्था -

एक चित जिह इक छिन धिआइओ
काल फास के बीच न आइओ। अकाल उसतति

अतः इस प्रकार की वाणी हमें प्रेरित करती है कि -

सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ ॥ अंग - 262

तीन बार वचन आया है कि कभी तो याद कर ले लेकिन हम तो पूर्णतः भूल ही चुके हैं, हमारे अन्दर अविद्या का अन्धकार छा चुका है -

भजहु गुोबिंद भूलि मत जाहु ॥
मानस जनम का एही लाहु ॥ अंग - 1159

उसे याद करो, भूलो मत। महापुरुष जब अमेरिका में आए तो उन्होंने युक्ति बतला दी, उन्होंने सत्संगत प्रदान कर दी -

सतसंगति कैसी जाणीअै ॥
जिथै एको नामु वखाणीअै ॥ अंग - 72

सुखमनी साहिब जी की पहली ही अष्टपदी और पहली ही पंक्ति का फुरमान यानि कि एक-एक अक्षर हमें इस तरफ प्रेरित करता है -

एक अखरु हरि मनि बसत नानक होत निहाल ॥
अंग - 261

यदि हम एक अक्षर भी मन में बसा लें - राम, अल्लाह, वाहिगुरू कुछ भी बसा लें तो उसी के द्वारा कल्याण हो जाएगा। युक्ति तो महापुरुष ही बताते हैं क्योंकि -

जिसु वखर कउ लैनि तू आइआ ॥
राम नामु संतन घरि पाइआ ॥

घर में से ही प्राप्त हो जाता है क्योंकि -

घर ही महि अंम्रितु भरपूरु है
मनमुखा सादु न पाइआ ॥
जिउ कसतूरी मिरगु न जाणै
भ्रमदा भरमि भुलाइआ ॥ अंग - 644

बाहरी तौर पर तो खूब दौड़ लगी हुई है लेकिन गुरू

जी कहते हैं कि -

बाहरि ढूढन ते छूटि परे
गुरि घर ही माहि दिखाइआ था ॥ ***अंग - 1002***

इस घर के अन्दर ही जो हमें अपना घर दिखला दे, वही सतगुरू है -

घर महि घरु देखाइ देइ सो सतिगुरु पुरखु सुजाणु ॥
अंग - 1291

बाणी गुरु गुरु है बाणी विचि बाणी अंम्रितु सारे ॥
अंग - 1982

गुरवाणी हमें नाम की तरफ प्रेरित करती है कि सत्संग में जाओ और नाम सिमरन करो।

उठत बैठत सोवत नाम ॥ ***अंग - 286***

जब उठते, बैठते, सोते, जागते नाम शुरू हो गया तो उसके बाद फिर यह अवस्था प्राप्त हो जाती है -

कबीर तूं तूं करता तू हूआ मुझ महि रहा न हूं ॥
जब आपा पर का मिटि गइआ जत देखउ तत तू ॥
अंग - 1375

इह नीसाणी साध की जिसु भेटत तरीऐ ॥
अंग - 320

कितनी बड़ी अवस्था हो जाती है? वहाँ पर तो फिर 'मैं', 'तूँ' में बदल जाती है, फिर तो कण-कण में वाहिगुरू दिखाई पड़ता है तथा सुनाई पड़ता है। फिर तो बाहरी आवाजें भी विघ्न नहीं डालती हैं। लेकिन हम लोग तो मायाजाल में बुरी तरह से फँस जाते हैं जबकि सन्तजन हमें छूटने का ढंग बताते हैं। अब अजामल को यही तो बताया था कि तुम सातवें पुत्र का नाम नारायण रख लो। अजामल उसके साथ हँसता-खेलता है लेकिन युक्ति पूरी है यानि कि युक्ति के द्वारा ही मुक्ति दिलवा दी। इस प्रकार से फिर झुंझलाहट में नहीं आता है, परेशानी में नहीं आता है, गुस्से में नहीं आता है बल्कि अब तो प्रसन्नचित्त रहता है -

नानक भगता सदा विगासु ॥
सुणिऐ दूख पाप का नासु ॥ ***अंग - 2***

जब महापुरुषों द्वारा उपयुक्त युक्ति की प्राप्ति हो जाती है तो फिर यह जीव खुशी-खुशी इस जीवन को सफल कर लेता है। अतः महापुरुषों के पास युक्तियाँ होती हैं। बैखरी से मध्यमा और मध्यमा से पसन्ती, जहाँ से कि हृदय के अन्दर अनुभव होना शुरू हो जाता है। इस अवस्था में जिह्वा से बिना ही सिमरन होना शुरू हो जाता है। इसके बाद परावाणी में जाकर तो ऐसी अवस्था प्राप्त हो जाती है कि जिसका ध्यान धरता है फिर उसी का रूप बन जाता है। अतः साधुओं की संगत करो क्योंकि उनकी संगत में से ही सारी प्राप्तियाँ होनी है।

ये सारी अवस्थाएँ उन्होंने कथन की हैं जिनकी संगत हमें प्राप्त हुई है, फिर तुम्हारी गारंटी भी उन्होंने ली है। ऐसे नहीं है कि केवल तोता रटन करने के लिए ही हमें लगाया है। वैसे बार-बार सिमरन के द्वारा हमारे अन्दर ऊर्जा आ जाती है। रात को सोते समय रक्षा के शबद पढ़कर व कीर्तन सोहिला जी को पढ़कर, शवासन में लेट जाओ और अपने श्वास को देखो कि वह आ रहा है और जा रहा है। संसार प्रसिद्ध योगी स्वामी राम जी जब रतवाड़ा साहिब में आए तो उन्होंने अपना यह अनुभव शेयर करते हुए बताया था। दरअस्ल सभी धर्मों का आन्तरिक मार्ग तो एक ही है। आत्म मार्ग के अन्दर उनके द्वारा बतलाई गई युक्तियों को प्रकाशित किया जाता है। वैसे उनका अधिकांश साहित्य तो अंग्रेजी भाषा में ही है लेकिन उनका हिन्दी व पंजाबी अनुवाद प्रकाशित किया जाता है। वे स्वयं तो संसार से एक किनारा करके ही बैठे हुए थे लेकिन जब उन्होंने रतवाड़ा साहिब वाले महापुरुषों की संगत की तो फिर उन्होंने बड़े-बड़े परोपकार किए। उन्होंने एक पुस्तक लिखी जिसमें उन्होंने इस बात का सविस्तार वर्णन किया कि धन्य श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी का वह कौन सा ऐसा उपदेश था, जिसने उसे सन्यासी और उदासी को बाबा बन्दा सिंह बहादर बना डाला? क्योंकि वह तो पहले लक्षमणदास वैरागी था, माधोदास था और वह कहाँ-कहाँ नहीं घूमा था लेकिन जब उसे पूरा गुरू मिला तो उसने उसे कर्मयोगी बना दिया, ठीक इसी प्रकार से स्वामी राम जी तो स्न्यासी थे लेकिन जब उन्हें महापुरुषों की संगत मिली तो वे बहुत बड़े कर्मयोगी बन गए। उन्होंने कई पुस्तकें गुरवाणी पर लिखीं जो कि आन्तरिक मार्ग को प्रशस्त करती हैं।

गुरवाणी तो अगाध बोध है, चाहे जितनी मर्जी इसकी विचार कर लो लेकिन -

बाणी बिरलउ बीचारसी जे को गुरमुखि होइ ॥
अंग - 935

क्योंकि

परथाइ साखी महा पुरख बोलदे साझी सगल जहानै॥
गुरमुखि होइ सु भउ करे आपणा आपु पछाणै ॥
अंग - 647

गुरुमुखजन तो अपने अन्दर की खोज को करते हैं, अतः सबसे पहले सत्संग अवश्य करो और उसके बाद अन्तरंग साधन करो। बहिरंग साधन तो हो ही रहे हैं, इन्हें तो बताने की जरूरत ही नहीं है लेकिन अन्तरंग साधन करके ही

(शेष पृष्ठ 44 पर)

नूरानी जीवन की झलक

(भगता की चाल निराली .....)

(प्यारे महापुरुषों के जन्म दिवस पर विशेष)

(डा.) भाई सुखविन्दर सिंह

परमात्मा के भय तथा प्रेम में रहना ही सन्त या भक्त का जीवन है। भय तथा प्रेम के बिना वाहिगुरू जी के साथ प्रेम करना या उसकी भक्ति करनी असम्भव है *'नानक जिन मनि भउ तिना मनि भाउ।।' (अंग - 465)* वास्तव में वाहिगुरू जी की प्राप्ति का मुख्य साधन है - भय तथा निर्भय। *'भै ते निरभउ पाईऐ मिलि जोती जोति अपार।।' (अंग - 516)* वास्तविक सच्चाई यह भी है कि सारी सृष्टि व सारे ब्रह्मांड, जिनका मालिक परमात्मा स्वयं है *(कोटि ब्रहमंड को ठाकुरु सुआमी सरब जीआ का दाता रे।। (अंग - 612)* उसके भय में ही किसी विशेष नियम में बँधे हुए चल रहे हैं -

भै विचि पवणु वहै सदवाउ ॥
भै विचि चलहि लख दरीआउ ॥ ***अंग - 464***

करोड़ों ब्रह्मांडों के अन्दर जब हम दृश्यमान जगत पर दृष्टिपात करते हैं तो मनुष्य को ही सर्वश्रेष्ठ माना जाता है *'अवर जोनि तेरी पनिहारी।। इसु धरती महि तेरी सिकदारी।।' (अंग - 374)* लेकिन मनुष्यों की भी किस्में होती हैं। इन्हें भी महापुरुषों ने चार भागों में विभक्त किया है और ये चार किस्मे हैं - पामर, विषयी (भोगी) जिज्ञासु तथा मुक्त आत्माएँ। इनमें सर्वश्रेष्ठ किस्म है - मुक्त आत्माएँ। पामर तथा भोगी आत्म मार्ग के पथिक नहीं हैं, उनके लिए तो 'यह जग मीठा है, अगला किसने देखा है' तथा उनका उदेश्य होता है - 'खाओ पियो तथा ऐश करो'। इनके जीवन को पशुतुल्य माना गया है। *'आवन आए स्रिसटि महि बिनु बूझे पसु ढोर।।' (अंग - 251)* कई प्रमाण गुरवाणी में इस प्रकार के भी मिलते हैं, जहाँ पर कि पशुओं से भी निचले स्तर का जीवन इस प्रकार के लोगों का माना गया है -

पसू मिलहि चंगिआईआ खड्डु खावहि अंम्रितु देहि ॥
नाम विहूणे आदमी धि्रगु जीवण करम करेहि ॥
अंग - 489

लेकिन जो तीसरी तथा चौथी किस्म के लोग हैं, वे आत्म मार्ग के पथिक हैं, यानि कि वे इस मार्ग पर चलते हुए आत्मदर्शी बन जाते हैं। उन्हें पहले तो जिज्ञासु कहा जाता है और जब वे अपनी मंजिले मकसूद पर पहुँच जाते हैं, तो उन्हें मुक्त आत्माओं का दर्जा प्राप्त हो जाता है। ये ब्रह्म श्रोता, ब्रह्म वक्ता व ब्रह्म निष्ठावान होते हैं। आत्म मार्ग के सभी मंजिलों को इन्होंने पार कर लिया होता है यानि कि कर्म, उपासना, ज्ञान तथा विज्ञान के बीच से गुजरते हुए ये मल विषशेप तथा आवरण के पर्दों को दूर करके ये अपनी मंजिल पर पहुँच जाते हैं।

किव सचिआर होईऐ किव कूड़ै तुटै पालि ॥
हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि ॥
अंग - 1

वे उस परम सत्य के साथ जुड़कर स्वयं भी सत्य बन जाते हैं। ये मुक्त पुरुष सदैव परमात्मा की रजा में राजी रह कर ही अपना जीवन व्यतीत करते हैं। ये वाहिगुरू जी के निर्मल भय में रहते हैं तथा प्रत्येक क्षण व पल उसी की तरफ खिंचे रहते हैं -

सीने खि्च जिनाँ ने खाधी ओ कर अराम नहीं बहिंदे।
निहुं वाले नैणाँ की नींदर ओ दिने रात पए वहिंदे।
इको लगन लगी लई जाँदी है टोर अनंत उनाँ दी।
वसलों उरे मुकाम न कोई सो चाल पए नित रहिंदे।
डा. भाई वीर सिंघ जी

एक तरफ जहाँ सांसारिक भय के कारण व्यक्ति उसके मूल श्रोत से दूर होता जाता है, वहीं दूसरी तरफ परमात्मा का प्यारा परमात्मा या वाहिगुरू जी के प्रेम में रहता हुआ उसके नजदीक होता-होता उसी में अभेद या उसी का रूप हो जाता है। यही कारण है कि भक्ति दो से शुरू होती है तथा एक में समा जाती है। गुरू का सिक्ख गुरू में अभेद हो जाता है यानि कि मछली और पानी वाली अवस्था को पार करके जल में जल समाने वाली अवस्था की प्राप्ति हो जाती है -

जिउ जल महि जलु आइ खटाना ॥
तिउ जोती संगि जोति समाना ॥

मिटि गए गवन पाए बिस्राम ॥
नानक प्रभ कै सद कुरबान ॥ *अंग - 278*

परमात्मा के प्यारे उसके निर्मल भय में रहते हुए शान्त हो जाते हैं, जब कि सांसारिक भय में रहने वाला व्यक्ति अशान्त व बेचैन हो जाता है। परमात्मा का प्यारा स्वयं शान्त होता हुआ दूसरों को भी शान्ति बाँटने में समर्थ हो जाता है क्योंकि उसके पास भक्ति का खजाना होता है। नाम रूपी ठंडक के भण्डार उनके पास होते हैं, परमात्मा के भय में रहते हुए, अपने भ्रमों को समाप्त करके, परमात्मा के अन्दर ही लीन हो जाना, परमात्मा के प्यारों का मुख्य उद्देश्य होता है -

भै बिनु भगति न होवई नामि न लगै पिआरु ॥
सतिगुरि मिलिऐ भउ उपजै भै भाइ रंगु सवारि ॥
अंग - 788
सतिगुर ते भउ उपजै पाईऐ मोख दुआर ॥
अंग - 1288

परमात्मा तथा उसके द्वारा रचित सृष्टि के प्रेम में रहने वाले को ही भक्त, सन्तजन, महापुरुष, गुरुमुख प्यारा, साधू इत्यादि शब्दों के द्वारा सम्मानित किया गया है। इनके जीवन के बारे में अनेकों प्रमाण गुरवाणी में प्राप्त होते हैं -

सोई भगतु दुखु सुखु समतु करि जाणै
हरि हरि नामि हरि राता ॥ *अंग - 574*

सेई भगत जि साचे भाणे ॥ *अंग - 677*

सेई भगत जिन सचि चितु लाइआ ॥
अंग - 1364

भगता की चाल निराली ॥
चाला निराली भगताह केरी बिखम मारगि चलणा ॥
लबु लोभु अहंकारु तजि त्रिसना बहुतु नाही बोलणा॥
अंग - 918

गुरवाणी के इन पावन कथनों के आधार पर भक्त व परमात्मा के प्यारे सन्त महापुरुष वही हैं जो कि समदर्शी हों, परमात्मा के नाम में लीन हों तथा विषय वासनाओं के प्रभाव से मुक्त हों।

बाबा फरीद जी ने इसी अवस्था को और अधिक स्पष्ट करते हुए फुरमान किया है कि -

मति होदी होइ इआणा ॥ ताण होदे होइ निताणा॥
अणहोदे आपु वंडाए ॥ को अैसा भगतु सदाए ॥
अंग - 1384

इस प्रकार की अवस्था वालों को गुरवाणी के अन्दर इस प्रकार से रेखांकित किया गया है -

जिना न विसरै नामु से किनेहिआ ॥
भेदु न जाणहु मूलि साँई जेहिआ ॥ *अंग - 397*

आठ पहर प्रभ बसहि हजूरे ॥
कहु नानक सेई जन पूरे ॥ *अंग - 286*

जिना सासि गिरासि न विसरै हरि नामाँ मनि मंतु ॥
धंनु सि सेई नानका पूरनु सोई संतु ॥ *अंग - 319*

जनम मरण दुहहू महि नाही जन परउपकारी आए ॥
जीअ दानु दे भगती लाईन हरि सिउ लैनि मिलाए॥
अंग - 749

इस प्रकार के अनेकों प्रमाण श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर शोभायमान हैं, जिनके द्वारा मुक्त पुरुषों की अवस्था का जिक्र मिलता है। इस प्रकार की अवस्था प्राप्त महापुरुषों की संगत की प्राप्ति उत्तम भाग्यों की निशानी मानी जाती है-

हरि कीरति साधसंगति है सिरि करमन कै करमा ॥
कहु नानक तिसु भइओ परापति
जिसु पुरब लिखे का लहना ॥ *अंग - 642*

इसी प्रकार की संगत अनेकों प्रेमीजन को प्राप्त हुई और वह संगत प्रदान करने वाले महापुरुष थे - सन्त वरियाम सिंह जी।

जिज्ञासुजनों का मार्ग दर्शन करने के लिए परमात्मा समय-समय पर इस प्रकार की अवस्था वाले मुक्त महापुरुषों को इस धरा पर भेजता ही रहता है। जिनके आने से एक दो नहीं बल्कि अनेकानेक जीवों का भला हो जाता है। चूँकि वे स्वयं, परमात्मा के साथ जुड़े होते हैं, इसलिए अन्य लोगों को भी परमात्मा के साथ जोड़ने के प्रमुख कार्य में लगे रहते हैं। इसी प्रकार के प्यारे महापुरुष थे रतवाड़ा साहिब वाले। परमात्मा के प्यारों की चाल निराली होती है। 'भगता की चाल निराली।' लेकिन यहाँ पर गुरू महाराज जी आन्तरिक अवस्था की समझ प्रदान कर रहे हैं। परमात्मा के प्यारों की चाल तन, मन व धन के तौर पर संसार से निराली ही है। उनका तन भी परमात्मा के लेखे में ही होता है। तन के द्वारा धन कमाया जाता है। जब तन गुरू के लेखे में लग गया तो फिर धन भी लेखे में लग जाता है। प्रत्येक समय गुरू में अभेद होने के कारण मन भी अमन हो जाता है और मैं व मेरी समाप्त होकर अभेदावस्था प्राप्त हो जाती है यानि कि वे जीवन मुक्त अवस्था के धारणी बन जाते हैं - 'जीवन मुकति सो आखीऐ मरि जीवै मरीआ।।' (अंग - 44ञ) फिर उनके जीवन जीने के ढंग से अनेकों जिज्ञासु अपना मार्ग दर्शन करते

हैं। दरअस्ल वे गुरवाणी की रौशनी में प्रकाश प्राप्त करके संसार के लिए प्रकाश स्तम्भ का कार्य करने लगते हैं। ऐसे ही हैं - रतवाड़ा साहिब वाले महापुरुष।

इनका सारा जीवन, बचपन से लेकर शरीर के अन्तिम समय तक, एक दिशा निर्देशक बनकर ही उभरता है। वे केवल एक उत्तम शख्सियत ही नहीं थे बल्कि वे तो एक सफल संस्था ही थे। उन्होंने अपने जीवन में संस्था बनकर जो भी कार्य किए वे आज भी जन साधारण के लिए प्रकाश स्तम्भ बनकर रौशनी ही रौशनी प्रदान कर रहे हैं।

आप जी की निराली चाल तथा नूरानी जीवन की झलक पर पुनार्वलोकन करना असम्भव है, फिर भी उस सुगन्धित जीवन में से प्राप्त सुगन्ध व निराली चाल का वर्णन करने की विनम्र प्रार्थना सहित कोशिश की जा रही है। नि:शंक रूप से महापुरुषों के जीवन के बारे में लिखना बुद्धिमण्डल के वश की बात नहीं है क्योंकि उनका निवास तो बुद्धि की पहुँच के पार, आत्म-मण्डल में हुआ करता है, जैसे कि डा. भाई वीर सिंह जी ने फुरमान किया है -

जिन्हां उचयाईआं उतों 'बुधी' खंभ साड़ ढठी,
मल्लो मल्ली उथे दिल मारदा उडारीआं।
पञाले अणडिठे नाल, बुल्ह लग जाण ओथे,
रस ते सरूर चड़े, झूंमां आउण पयारीआं।
'गञानी' सानूं होड़दा ते 'वहिमी ढोला' आखदा ए,
'मारे गए जिन्हं लाईआं बुधों पार तारीआं।'
'बैठ वे गिआनी! बुधी मंजले दी कैद विच,
वलवले दे देश' साडीआं लग गईआं यारीआं।

डा. भाई वीर सिंघ जी

एक बार आप जी ने राड़ा साहिब वाले महापुरुषों के साथ इस बात का जिक्र किया कि ज्ञानी मेहर सिंह जी आप जी का जीवन लिखना चाहते हैं। उन्होंने फुरमान किया कि सन्तजनों के जीवन को कौन जान सकता है कि वह कैसा होता है? बुद्धिमण्डल वाले तो उनकी बाह्य क्रियाओं का ही उल्लेख करेंगे कि वे वहाँ पर गए, वहाँ पर उन्होंने इस प्रकार से कहा, आदि। लेकिन उनकी आन्तरिक अवस्था को कौन जान सकता है? जब सुरति आत्म मण्डल में उड़ान भरती है तो उस समय जो लीलाएँ घटित होती हैं तथा जिन मण्डलों में से सुरति गुजरती है जैसे कि रिद्धियों-सिद्धियों के मण्डल भी बीच में आते हैं उन्हें बुद्धिमण्डल का व्यक्ति कैसे जान सकता है? परमात्मा का प्यारा भक्त तो रिद्धियों-सिद्धियों की तरफ देखता भी नहीं है क्योंकि उसका मार्ग दर्शन गुरवाणी करती है -

रिधि सिधि सभु मोहु है नामु न वसै मनि आइ ॥
अंग - 593

सिधु होवा सिधि लाई रिधि आखा आउ ॥
गुपतु परगटु होइ बैसा लोकु राखै भाउ ॥
मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ ॥
अंग - 14

यह भी सत्य है कि न चाहते हुए भी सहज-स्वभाव ही गुरू की कृपा द्वारा समस्त रिद्धियाँ-सिद्धियाँ उनके आगे-पीछे ही रहती हैं वे सेवा करने के लिए आतुर रहती हैं लेकिन परमत्मा के भक्त उन्हें अपने से दूर ही रखते हैं -

नव निधी अठारह सिधी पिछै लगीआ फिरहि
जो हरि हिरदै सदा वसाइ ॥ ***अंग - 649***

अत: महापुरुषों के जीवन के बारे में केवल बुद्धिमण्डल के स्तर पर लिख पाना असम्भव है लेकिन गरवाणी की रौशनी में जाकर जब हम उनके जीवन पर दृष्टिपात करते हैं तो प्रत्यक्ष तौर पर उनके जीवन में आत्मिकता दिखाई पड़ती है। यहाँ पर हम गुरवाणी के प्रकाश में महापुरुषों के जीवन पर एक विहंगम दृष्टि डालने की कोशिश कर रहे हैं -

1) धंनु सु वंसु धंनु सु पिता धंनु सु माता जिनि जन जणे।। (अंग - 1135) - आप जी ने 17 जून सन् 1918 के शुभ दिवस पर नगर धमोट जिला लुधियाना में सम्माननीय पिता सरदार करतार सिंह जी तथा माता इन्द कौर जी के गृह को चार चाँद लगाए। अभी किसी को यह नहीं पता है कि इस गृह का भाग्योदय करने वाले ने अन्य अनेकों घरों को नाम-वाणी के साथ जोड़कर उन्हें भागग्शाली बना देना है क्योंकि अभी तो रूहानी सुगन्ध ने केवल शारीरिक तौर पर जन्म ही लिया था।

2) हरि के सेवक जो हरि भाए तिन की कथा निरारी रे।। (अंग - 855) - आप जी का जीवन बाल्यावस्था से ही विलक्षण था -

जब लग खालसा रहे निआरा
तब लग तेज देउ मै सारा।

के पावन कथनानुसार आप जी की चाल बचपन से ही निराली थी। घर में सिक्खी विरासत होने के कारण साधुओं, सन्तजनों व गरुमुख प्यारों का आना-जाना प्राय: बना ही रहता था। उस समय के सारे ही सन्तजनों, भले ही वे किसी भी सम्प्रदाय या टकसाल से सम्बन्ध रखते थे, के साथ आप जी के पिता जी प्यार व सम्मानभाव रखते थे। यही कारण था कि बचपन से ही आपको सन्तजनों की संगत को जीने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा, फलस्वरूप प्रत्येक समय नाम-वाणी की लगन आपके अन्दर भी रहती थी। आप सदैव एकान्त की तलाश में रहते थे और जहाँ कहीं भी आपको एकान्त मिलता चाहे वह गन्ने का खेत होता या सिंचाई करने वाले खेत का क्यारा होता अथवा कोई अन्य अच्छी एकान्त

जगह होती तो आप समाधिस्थ होकर घंटों तक लगातार नाम वाणी के साथ लीन हो जाते। श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के पाठ करने की सन्था (प्रशिक्षण) लेकर श्री सहज पाठ व श्री आखण्ड पाठ साहिब जी आप बचपन से ही करने लग पड़े थे। गुरू घर में जाकर 'आसा दी वार' का कीर्तन करना, आप जी का नित्तनेम था।

3) कोई आणि मिलावै मेरा प्रीतमु पिआरा ...।। (अंग - 757)

आप बचपन से ही अमृतपान करके सिंह सज गए थे, लेकिन आपके अन्दर किसी पूर्ण महात्मा के प्यार का आकर्षण बना रहता था। समय आ गया और आपके पूर्वजन्मों के कर्मों के फलस्वरूप राड़ा साहिब वाले महापुरुषों के साथ आपका मिलाप हो गया -

पूरब करम अंकुर जब प्रगटे
भेटिओ पुरखु रसिक बैरागी ॥
मिटिओ अंधेरु मिलत हरि नानक
जनम जनम की सोई जागी ॥ *अंग - 204*

प्रथम मुलाकात में ही दिलों के सौदे हो गए और जौहरी के द्वारा हीरे की पहचान कर ली गई। महापुरुषों ने वचन किया कि तुम कौन हो और कहाँ से आए हो?

सुनहु रे तू कउनु कहा ते आइओ ॥
एती न जानउ केतीक मुदति
चलते खबरि न पाइओ ॥ *अंग - 999*

पूर्ण जिज्ञासु व आत्म मण्डल के पथिक प्यारे महापुरुषों ने जवाब के तौर पर वचन किया कि वह एक ज्योति है, जिससे मैं अलग हुआ हूँ। पैंतालिस मिनटों तक राड़ा साहिब वाले महापुरुष समाधिस्थ रहे और उसके बाद उन्होंने दिव्य वचन किए कि आज एक सोहागिन का दूसरी सोहागिन के साथ मिलाप हुआ है, भावार्थ एक आत्मिक मण्डल में निवास करने वाले को, किसी आत्मिक मण्डल के पथिक का मिलाप हुआ है।

4) आगाहा कू व्राघि पिछा फेरि न मुहडड़ा। (अंग - 1096)

राड़ा साहिब वाले महापुरुषों के साथ मिलाप हो जाने के बाद तो उत्तरोत्तर आपकी अध्यात्मिक उन्नति होती चली गई और उनके प्यार को आपने आजीवन जिया। उनकी संगत में रहकर आपके अन्दर नाम-वाणी व प्रेम तथा त्याग बढ़ता ही चला गया। आप उस दौर में कई-कई महीनों तक एकान्तवास होकर भजन बन्दगी में लगे रहते। भावार्थ आप आत्म मार्ग के पथिक बन गए और लगातार इस पथ पर आगे ही आगे बढ़ते चले गए। फिर आपकी सुरति इस मार्ग पर कभी पीछे की तरफ नहीं मुड़ी।

5) हकु पराइआ नानका उसु सूअर उसु गाइ (अंग - 141)

आप जी का परिवार सिक्खी की रीतियों व मर्यादाओं का यानि कि गुरमति का परिपक्व धारणी था। आप जी के पिता जी जत्थेदार बाबा करतार सिंह जी सदैव गुरमति के तीनों सुनहरे उसूलों यानि कि किरत करनी, नाम जपना तथा मिल बाँटकर ग्रहण करना पर बखूबी पहरा देने वाले थे। जब कभी घर में साग बनता तो आप पहले पूछते कि क्या यह साग अपने खेत से लाकर बनाया है? जब उनके खेत में फसल पकती तो वे फसल की बल्लियों को, जो दूसरे खेत वालों की होती थीं, उन्हीं की तरफ मोड़ देते ताकि उनकी फसल के दाने उनके अपनी तरफ न आ जाएँ। इस प्रकार के व्यवहारिक जीवन से पता चलता है कि आप जी का परिवार सच्ची व सुच्ची किरत करने को कितनी तरजीह देता था।

6) संजोगु विजोगु धुरहु ही हूआ (अंग - 1007)

आप जी के जीवन साथी बनने का गौरव सम्माननीया सन्त माता रणजीत कौर जी को प्राप्त हुआ जो कि दाउदपुर (नजदीक खन्ना) से सन्त बाबा हीरा सिंह जी के सपुत्री थे। सन्त बाबा हीरा सिंह जी द्वारा, आपके वैवाहिक संयोगों के बारे में भविष्यत वचन, आपके जन्म से आठ वर्ष पहले ही कर दिए थे, जिस समय कि आप श्री आखण्ड पाठ साहिब करने के लिए धमोट नगर में आप जी के गृह में आए हुए थे। उस समय उन्होंने वचन किया कि जत्थेदार सरदार करतार सिंह जी! आपके घर में आज से आठ वर्ष बाद एक बेटे ने जन्म लेना है और मेरे घर में एक बेटी ने। उन दोनों का वैवाहिक संयोग दरगाह से ही लिखा हुआ है और यह लो उनके रिश्ते के तौर पर एक रुपया। इस प्रकार से उनके भविष्य के वचन आगे सत्य साबित हुए। समय आने पर आप जी के पावन आनन्द कारज (सन्त माता) रणजीत कौर जी के साथ सम्पन्न हुए। (माता) रणजीत कौर जी ने अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों को बखूबी निभाते हुए गुरमति प्रचार के क्षेत्र में आजीवन आपके कन्धे के साथ कन्धा जोड़कर सेवा की। आप जी ने आजीवन इस प्रकार से महापुरुषों का साथ निभाया कि आपने इस बात को सिद्ध करके दिखा दिया कि महिलाएँ भी पुरुषों की भांति गुरमति की धारणी होकर, गुरमति प्रचार में डटकर अपना योगदान कर सकती हैं।

7) घालि खाइ किछु हथहु देइ।। नानक राहु पछाणहि सेइ (अंग - 1245)

सच्ची-सुच्ची किरत करनी गुरमति का आधारभूत सिद्धान्त है। आपने इस सिद्धान्त पर आजीवन पहरा दिया।

आपने अपनी आवश्यक शिक्षा प्राप्त करने के बाद फौज में नौकरी की, उसके बाद पंजाब सचिवालय में नौकरी की और उसके बाद सफल किसान बनकर कृषि कार्य किया। इन समस्त कार्यों के दौरान आपने सत्य, ईमानदारी, मेहनत, लगन तथा गुरवाणी के उसूलों पर पहरा दिया। अपनी फौज की सर्विस के दौरान फौज के लिए खरीदे गए सामान के सौदे में हो रहे घपले का पर्दाफाश किया। पंजाब सचिवालय में सेवा के दौरान प्राकृतिक आपदाओं के विभाग का उत्तरदायित्व आपके पास था। अपनी सारी सर्विस के दौरान दिन-रात मेहनत करके आपने जन साधारण को अधिकाधिक सुविधाएँ प्रदान करने के सफल प्रयत्न किए। आपकी सर्विस के दौरान के जीवन पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि प्रत्येक व्यक्ति को आपके जीवन से दिशा निर्देश लेने चाहिए कि सांसारिक उत्तरदायित्वों को किस प्रकार से निभाना है।

8) जैसे जल महि कमलु निरालमु मुरगाई नै साणे।। सुरति सबदि भव सागरु तरीअै नानक नामु वखाणे।। (अंग - 938)

गुरवाणी के इस सिद्धान्त की रौशनी में आपने अपने जीवन को व्यतीत किया और घर-बार में रहते हुए 'नानक सतिगुरि भेटिअै पूरी होवै जुगति।।' हसंदिआ खेलंदिया पैनंदिआ खावंदिआ विचे होवै मुकति।। (अंग - 522) के अनुसार सारी जिम्मेदारियों को सम्भालते हुए नाम वाणी के साथ जुड़कर आपने जीवन यापन किया -

नामा कहै तिलोचना मुख ते रामु संम्हालि ॥
हाथ पाउ करि कामु सभु चीतु निरंजनु नालि ॥

अंग - 1376

आप हाथों-पैरों से कार्य करते और सुरति को सदैव वाहिगुरू जी के साथ जोड़ कर रखते। आपने इस प्रकार का जीवन जीकर दिखलाया कि गुरमति के सिद्धान्त स्वतः ही आपके जीवन में से दृष्टिगोचर होते दिखाई पड़ते हैं।

9) आपि जपहु अवरह नामु जपावहु (अंग - 290)

गुरमति के अन्दर कोई विशेष पुजारी वर्ग होने की रीति नहीं है, यहाँ तो प्रत्येक गुरसिक्ख मिशनरी है। गुरमति के प्रचार और प्रसार की जिम्मेदारी प्रत्येक सिक्ख को सतगुरू जी ने प्रदान की है। सारा सिक्ख इतिहास इस बात का साक्षी है। स्वयं गुरमति के उसूलों का धारणी होना और गुरमति नियम व मर्यादाओं में परिपक्व रहना गुरसिक्ख की आधारभूत जिम्मेवारी है। सिक्ख इतिहास के अन्दर समय-समय पर गुरसिक्खों ने स्वयं साधनाएँ, तपस्याएँ और कठिन परिश्रम किए तथा अन्य लोगों को भी इस मार्ग का अनुगामी बनने की प्रेरणाएँ कीं, अनेकों सन्त-महापुरुष और गुरसिक्ख प्यारों ने स्वयं तप साधनाएँ कीं तथा अनेकों प्राणियों के प्रेरक बने। 'गुरमुखि कोटि उधारदा भाई दे नावै एक कणी।।' (अंग - 608) गुरमति के अन्दर सिद्धान्त को व्यवहारिक रूप से जीने की ताकीद है क्योंकि सिद्धान्त ने व्यवहारिक रूप में प्रकट होकर ही वास्तविक प्रभाव छोड़ना है। इस प्रकार से गुरमति सिद्धान्त की रूपमानता महापुरुषों के प्यारे जीवन में से प्रत्यक्ष रूप से प्राप्त होती है। पहले पिछले जन्म की तप साधनाएँ और फिर इस जन्म में समर्थ गुरू जी के आशीर्वाद के फलस्वरूप सन्त-महापुरुषों की संगत का आनन्द उठाते हुए आपने सेवा व सिमरन की पहले स्वयं कठिन तप साधनाएँ व कमाइयाँ कीं और फिर अनेकानेक टूटी हुई आत्माओं को परमेश्वर और गुरु शब्द के साथ जोड़ने का बीड़ा उठा लिया। इस श्रृंखला में आपने अत्यन्त कठिन परिश्रम व अथक सेवाएँ निभाई। रसयुक्त कीर्तन के माध्यम से आपने देश व विदेशों में असंख्य प्रेमीजनों को गुरु शब्द के साथ जोड़ा। बचपन में नगर धमोट, फिर सिन्धु (पाकिस्तान) उसके बाद फौज की सेवा के दौरान तत्पश्चात चण्डीगढ़, रोपड़ व पंजाब, हरियाणा, हिमाचल, मुम्बई, दिल्ली तथा विदेशों में अनेकों प्रेमीजनों को नाम-वाणी का छींटा देकर श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के सिद्धान्त के साथ जोड़ा। शरीर के अन्तिम समय तक कथा-कीर्तन के प्रवाह आप जी के द्वारा चलते रहे। रतवाड़ा साहिब के वार्षिक समागमों में लाखों की संख्या में संगत एकरस व समाधिस्थ होकर एवं परम शान्ति बनाकर आपके विचारों को श्रवण किया करती थी। इसके अतिरिक्त आप जी के द्वारा कीर्तन की वीडियोज, सीडीज व आडियो तैयार करवाई गई। इस सम्बन्ध में आपको राड़ा साहिब वाले महापुरुषों के भविष्यत के वचन भी हुए थे। अतः आप जी ने आधुनिक मीडिए का प्रयोग करते हुए कथा कीर्तन के खूब प्रवाह चलाए। आज इंटरनेट मीडिए का युग होने के कारण, आप जी के अनुभवी प्रवचनों को 'आत्म मार्ग' मैगजीन, सोशल मीडिए, फेसबुक, व्हाट्स ऐप, यू-टयूब तथा अन्य चैनलों पर श्रवण किया जा सकता है। भले ही शारीरिक तौर पर आज आप हम लोगों की आँखों से ओझल हो चुके हैं, लेकिन वर्तमान समय में भी आप उसी तरह से कथा व कीर्तन के माध्यम से जिज्ञासुओं के प्रेरक व मार्ग दर्शक बने हुए दिखाई पड़ रहे हैं।

उपर्युक्त सारी विचार का तात्पर्य यह है कि आप जी ने आजीवन 'आपि जपहु अवरह नाम जपावहु' के सिद्धान्त पर पहरा दिया। आपने पहले स्वयं नाम-वाणी की कमाई की और बाद में आप जन-साधारण की प्रेरणा का श्रोत बने।

10) परउपकार नित चितवते नाही किछु पोच।।

(अंग - 815)

गुरमति के प्रचार के साथ-साथ संगत के लिए परोपकार के चश्मे आप जी के अन्दर प्रत्येक समय बहते रहते थे। आपने इस लोकाई को सच्चे की कोठड़ी समझा।

इहु जगु सचै की है कोठड़ी सचे का विचि वासु॥
अंग - 463

अवलि अलह नूरु उपाइआ कुदरति के सभ बंदे ॥
एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे॥
अंग - 1349

के सिद्धान्त पर पहरा देते हुए मानवता के कल्याणार्थ अनेकों कार्यों की सेवा सतगुरू जी ने आपसे ली। मजहबों की संकीर्ण दीवारों को तोड़ते हुए

ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीऐ एकु एकु वखाणीऐ ॥
आतम पसारा करणहारा प्रभ बिना नही जाणीऐ ॥
अंग - 846

के सिद्धान्त पर चलते हुए नगर चाहड़ माजरा (नजदीक रतवाड़ा साहिब) में मुसलमान भाइयों के लिए अल्लाहताला की इबादत हेतु आपने मस्जिद का निर्माण करवाकर दिया ताकि मुस्लिम भाईचारा भी अल्लाहताला की बन्दगी कर सके, अपने इष्ट को श्रद्धासुमन भेंट कर सके। उनके द्वारा किए गए परोपकारों की श्रृंखला में एक नहीं बल्कि अनेकों कार्य आज भी मानवता के लिए प्रकाश स्तम्भ हैं। उनके द्वारा किया सबसे बड़ा परोपकार, उनके द्वारा टूटी हुई रूहों को परमात्मा के साथ जोड़ना ही है। यथा -

जीअ दानु दे भगती लाईन हरि सिउ लैनि मिलाए ॥
अंग - 749

लेकिन इसके अतिरिक्त अन्य भी अनेकों परोपकारी कार्य हैं जो कि आप जी के द्वारा जन कल्याणार्थ तथा जीवों पर दया करते हुए किए गए।

सन् 1988 ई. तथा सन् 1993-94 में पंजाब के अन्दर आई हुई भयंकर बाढ़ के दौरान बाढ़ पीड़ितों की हर सम्भव मदद की गई। गुजरात में आए हुए भूचाल के दौरान एक करोड़ अट्ठाइस लाख की सामग्री वहाँ जाकर सेवादारों की टीम भेजकर, जिसके जत्थेदार ट्रस्ट के वर्तमान मुखी बाबा लखबीर सिंह जी थे, उनकी हर सम्भव मदद की गई। ट्रस्ट के संस्थापक महापुरुषों के पदचिन्हों पर चलते हुए, यह ट्रस्ट वर्तमान समय में भी परोपकारी कार्यों के लिए सतत् प्रयत्नशील है। नेपाल के भूचाल के दौरान जरूरतमन्दों की गई सेवा, मुफ्त नेत्र चिकित्सा कैंप, नि:शुल्क अस्पताल, नि:शुल्क सिलाई व कढ़ाई प्रशिक्षण केन्द्र, आत्म मार्ग मैगजीन, वृद्धाश्रम, होस्टल में रहने वाली बच्चियों को नि:शुल्क होस्टल सुविधा तथा अन्य अनेकों जन-कल्याण के कार्य आज भी पहले की भांति उन्नत अवस्था में चल रहे हैं। गुरवणी के प्रत्यक्ष सिद्धान्त -

जनम मरण दुहहू महि नाही जन परउपकारी आए ॥
जीअ दानु दे भगती लाईन हरि सिउ लैनि मिलाए॥
अंग - 749

की प्रत्यक्ष मिसाल, रतवाड़ा साहिब ट्रस्ट के संस्थापक महापुरुषो के जीवन में से प्राप्त हो रही है।

11) विदिआ वीचारी ता परउपकारी।। (अंग - 356)

29 जुलाई सन् 1986 ई. को रतवाड़ा साहिब स्थान अस्तित्व में आया और सुन्दर व आलीशान गुरु-दरबार का निर्माण हुआ। *'जिथै जाइ बहै मेरा सतिगुरु सो थानु सुहावा।।' (अंग - 450)* श्री आखण्ड पाठ साहिब, जपुजी साहिब, मूलमन्त्र तथा गुरुमन्त्र के आखण्ड पाठ के जाप आरम्भ हुए जो कि अब भी चल रहे हैं। विशाल दीवान हाल सगत की सुविधा के लिए बनाए गए। धार्मिक जरुरतों को पूरा करने के बाद क्षेत्रीय बच्चों के लिए गुणवत्तायुक्त शिक्षा का प्रबन्ध किया गया। दो स्कूल, बी.एड. कालेज तथा नर्सिंग कालेज आरम्भ किए गए, जो कि आज भी बुलन्दावस्था में चल रहे हैं। ग्रामीण बच्चों को शिक्षा के क्षेत्र में समय के बराबर का बनाने के लिए धार्मिक शिक्षा के साथ-साथ गुणवत्ता वाली शिक्षा उपलब्ध करवाई गई। आज भी रतवाड़ा साहिब प्रांगण में स्थित स्कूलों व कालेजों के बच्चे प्रत्येक क्षेत्र में नए-नए कीर्तिमान स्थापित करके अव्वल पुरुस्कार प्राप्त कर रहे हैं। यह महापुरुषों की दूर अंदेशी ही थी कि बच्चे किसी भी देश और कौम का भविष्य होते हैं, इसलिए यदि इन कोमल फूलों को सम्भाल लिया जाए तो हम लोगों के लिए यह बहुत बड़ी सेवा ही होगी।

12) ब्रहम गिआनी सद जीवै नही मरता।। (अंग - 273)

परमात्मा के प्यारे हमेशा जीवित ही रहते हैं, उनके द्वारा किए गए कार्यों के माध्यम से वे सदैव जीवित रहते हैं -

जंमणु मरणु न तिन् कउ जो हरि लड़ि लागे ॥
जीवत से परवाणु होए हरि कीरतनि जागे ॥
अंग - 322

जितने भी परोपकार के कार्य उनके द्वारा किए गए, आज भी उन कार्यों में से उनकी तस्वीर प्रत्यक्ष रूप से झलकती प्रतीत होती है। परोपकारी कार्यों के माध्यम से वे सदा ही संगत के मार्गदर्शक और प्रेरक बने रहेंगे। उनकी आन्तरिक और बाहरी चाल सदैव ही निराली रहेगी और उनकी

यह निराली चाल जन साधारण को विलक्षण और अद्वितीय दिशा सदैव ही प्रदान करती रहेगी। इस प्रकार के परमात्मा के प्यारों के लिए ही गुरवाणी की अधोलिखित पावन पंक्तियाँ कही गई प्रतीत होती हैं -

भगता की चाल निराली ॥
चाला निराली भगताह केरी बिखम मारगि चलणा ॥
लबु लोभु अहंकारु तजि त्रिसना बहुतु नाही बोलणा ॥
खंनिअहु तिखी वालहु निकी एतु मारगि जाणा ॥
गुर परसादी जिनी आपु तजिआ हरि वासना समाणी॥
कहै नानकु चाल भगता जुगहु जुगु निराली ॥
अंग - 918

गुरु चरणों में प्रार्थना है कि वाहिगुरू जी हम सबको उनके द्वारा आरम्भ किए गए कार्यों को और अधिक बुलन्दावस्था में लेकर जाने में अपना अधिकाधिक योगदान करने की सामर्थ्य प्रदान करे।

(पृष्ठ 37 का शेष)

जीवन-मनोरथ के बारे में पता चल पाएगा। यही कारण है कि महापुरुष सबसे पहले सत्संग पर बल देते हैं क्योंकि हमारे मनों के ऊपर मैल पड़ गई लेकिन जो वास्तव में सत्य के साथ जुड़ गया तो फिर -

पूरे का कीआ सभ किछु पूरा
घटि वधि किछु नाही ॥ ***अंग - 1412***

पूरा क्या है?

पूरा प्रभु आराधिआ पूरा जा का नाउ ॥
नानक पूरा पाइआ पूरे के गुन गाउ ॥ ***अंग - 295***

सुखमनी साहिब जी की वाणी -

सुखमनी सुख अंम्रित प्रभ नामु ॥
भगत जना कै मनि बिस्राम ॥ ***अंग - 262***

सारा काम तो मन का ही है। मन को रोकने के लिए महापुरुषों ने युक्ति बतला दी कि श्वासों के ऊपर पूर्ण नियन्त्रण कर लो -

.....इहु मनु उडन पंखेरु बन का ॥ अंग - 1253

यह तो दौड़ेगा ही लेकिन इस पर नियन्त्रण स्थापित कर लो -

पहले दस बार बोल कर गुरमन्त्र का उच्चारण करो, फिर दस मिनट चुप कर जाओ, एक आडियो कैसेट बनी हुई है और आज पूरे संसार में इंटरनैट पर भी प्राप्य है। बहुत सारे प्रेमीजनों की अवस्थाएँ ऊँची होती हैं क्योंकि संगत का कोई आर या पार नहीं हुआ करता है इसलिए गुरवाणी का फुरमान है -

विचि संगति हरि प्रभु वसै जीउ ॥ ***अंग - 94***

प्रतीक से सम्पत ध्यान में जाओ फिर सम्पत से अहंग्रह ध्यान में जाओ, जहाँ पर कि शब्द धुन है जो कि हमारे अन्दर चल रही है। उस ध्यान को सुनने का प्रयत्न करो। प्रतीक को महापुरुषों ने बना कर बताया है, पहले इसे करो और फिर उसे अपने अन्दर सुनो तथा इसे करते जाओ। इससे आगे का कार्य सतगुरू जी का है। वे तो स्वंय ही इस बात की गारंटी देते हैं कि यदि तुम ऐसे करोगे तो फिर तुम्हें यमराज के पास भी जाना नहीं पड़ेगा क्योंकि -

धरम राइ नो हुकमु है बहि सचा धरमु बीचारि ॥
दूजै भाइ दुसटु आतमा ओहु तेरी सरकार ॥
अंग - 38

वे तो -

साधसंगि धरम राइ करे सेवा ॥
साध कै संगि सोभा सुरदेवा ॥ ***अंग - 271***

फिर तो -

रे रे दरगह कहै न कोउ ॥
आउ बैठु आदरु सुभ देउ ॥ ***अंग - 252***

आओ -

सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ ॥ ***अंग - 262***

इसकी प्राप्ति करो -

कलि कलेस तन माहि मिटावउ ॥
सिमरउ जासु बिसुंभर एकै ॥
नामु जपत अगनत अनेकै ॥
बेद पुरान सिंम्रिति सुधाखर ॥
कीने राम नाम इक आखर ॥
किनका एक जिसु जीअ बसावै ॥
ता की महिमा गनी न आवै ॥
काँखी एकै दरस तुहारो ॥
नानक उन संगि मोहि उधारो ॥ ***अंग - 262***

'कांखी' कहते हैं, इच्छा को। यदि हमारे अन्दर तीव्र इच्छा जागृत हो जाए तो फिर सब कुछ स्वतः ही होता रहना है और फिर आन्तरिक सारी अवस्थाएँ स्वतः ही प्राप्त हो जाएंगी।

वाहिगुरु जी का खालसा, वाहिगुरु जी की फतहि।

गुरू अरजुन परतख हरि
(शहीदी दिवस जून 7, 2019)

डा. जगजीत सिंह

जून का महीना, विशेष रूप से, गुरू अर्जन देव जी की महान शहादत को समर्पित है। पंचम पातशाह की शहादत ने सिख लहर को एक नया मोड़ दिया। गुरू नानक देव जी ने मानवता के कल्याण के लिये निर्मल पन्थ चलाया। परमात्मा का भजन, नाम, सिमरण, सेवा, मानवी भाईचारा, न्याय, दया, परोपकार, दसों नाखूनों की कमाई तथा मिलकर खाना आदि मूलभूत आदर्श थे। निरभउ निरवैर परमात्मा की बन्दगी के साथ मिलाकर निरभउ निरवैर समाज की स्थापना की, जो हर प्रकार के रसमों, अवांछित रीति रिवाजों, भ्रमों, वहमों से मुक्त थी, धर्म का पाखंड जाल तोड़ा। बनावटी धार्मिक नेताओं की वास्तविका प्रकट करके लोगों को उनके भय जाल से मुक्त किया। आपका फ़रमान है -

कादी कूड़ु बोलि मलु खाइ। ब्राहमणु नावै जीआ घाइ।
जोगी जुगति न जाणै अंधु। तीने ओजाड़े का बंधु॥

***अंग** - 662*

लोगों में छूत-छात, जात-पात, ऊच-नीच, अमीरी-गरीबी की खाई को पार कर, संगत तथा पंगत कायम करके, मानवीय भाईचारे को प्यार तथा सुहृदयता के घेरे में लाये। राजसी क्षेत्र में जुल्म करने वाले राजाओं को सिंह (शेर) तथा अहलकारों को कुत्ते कहकर उनके नीच कार्यों को लोगों के सामने प्रकट किया। इस प्रकार दुखी, बलहीन, मानहीन जनता को नया साहस, नया बल, नया जीवन मिला और आम जनता गुरू घर के साथ जुड़नी शुरू हो गई। यह सिलसिला गुरू अर्जुन देव, पंचम पातशाह तक निर्विघन चलता रहा। करतारपुर साहिब, गोइन्दवाल साहिब, रामदास चक्क (अमृतसर) तरन-तारण साहिब, कई स्थान सिखी का केन्द्र बन गये। गुरू अर्जुन देव जी ने 1604 ई. में गुरू ग्रन्थ साहिब जी का सम्पादन करके सिखी विचारधारा का धुरा कायम कर दिया। सच का यह आलम तंग दिल दृष्टिकोण रखने वाले हाकिमों को अच्छा न लगा और यही गुरू अर्जुन देव जी की शहीदी का कारण बना।

शहीदी का यह महान साका 30 मई 1606 ई. को घटित हुआ। रावी नदी के निकट लाहौर किले में आप जी को कुछ दिन नज़रबन्द रखने के उपरान्त कई प्रकार के कष्ट देकर शहीद कर दिया गया। यह स्थान गुरूद्वारा डेरा साहिब नाम से प्रसिद्ध है।

गुरू अर्जुन देव जी की शहादत का जिम्मेवार, कुछ परम्परिक इतिहासकारों के अनुसार एक खत्री सरकारी अहलकार चन्दू था, जिसकी लड़की का रिश्ता गुरू हर गोबिन्द जी के साथ होना नियत हुआ था पर उसके द्वारा गुरू घर के प्रति निरादर पूर्वक शब्द सुनकर सिख संगत के कहने पर गुरू जी ने यह रिश्ता स्वीकार न किया। बदले की भावना से, उसने षडयन्त्र रचा, गुरू जी को कैद करवाया और शहीद करवा दिया। शहीदी का यह कारण किसी भी तरह से मानने लायक नहीं लगता। यह तो सम्भव है कि जब गुरू जी को शाही फ़रमान के अनुसार नज़रबन्द किया गया तो चन्दू ने निजी ईर्ष्या के कारण, गुरू जी को तसीहे देने में, दोजखों की सहायता की हो पर शहीदी का वास्तविक कारण जहाँगीर स्वंय था और उसके सलाहाकार शेख अहमद सरहन्दी मुज़ादिद अलफ सानी आदि थे। जब से औरंगजेब ने 1605 ई. में दिल्ली का तख्त सम्भाला, उसने गैर मुसलमानों के प्रति बड़ी कठोर नीति अपनाई। इसका एक कारण यह था कि हकूमत चलाने के लिये शरई कट्टरपंथियों का मोहताज था। शेख अहमद सरहन्दी नकशबदी कौम का उसका मुख्य सलाहकार था। जहाँगीर की इस कट्टर नीति का शिकार सबसे पहले गुरू घर बना जिसके सम्बन्ध में उसने झूठे सच्चे कई किस्से सुनाये जैसे कि वह तुज़के जहाँगीरी में लिखता है कि बहुत से भोले भाले हिन्दू तथा कुछ मूर्ख मुसलमान भी उस (गुरू अर्जुन देव जी) के शिष्य बने हुए हैं। वह लिखता है कि काफी समय से मेरे मन में यह विचार चल रहा है कि गुरू नानक देव से चली आ रही यह झूठ की दुकान या तो बन्द कर दी जाये या फिर इस (गुरू जी)

को इस्लाम के घेरे में लाया जाये।

जहाँगीर के तख्त पर बैठने के कुछ समय पश्चात ही उसके लड़के खुसरों ने बगावत कर दी और लाहौर जाते समय, वह कुछ देर के लिये गोइन्दवाल साहिब में रूका। गुरू महाराज के दर्शन किये और महिमा प्रकाश के अनुसार उसने लंगर में बैठकर भोजन किया और अगले दिन लाहौर को चल पड़ा। जब विद्रोह समाप्त हो गया और खुसरो पकड़ा गया तो जहाँगीर ने उन सभी लोगों को कठोर सजाएं दीं जिन्होंने खुसरों की सहायता की थी। संकीर्ण विचारों वाले कट्टरपंथियों के लिये यह उचित अवसर था। गुरू जी के बारे में ऐसी शिकायत की गई तथा जहाँगीर के हुक्म अनुसार, गुरू जी पर काफी जुर्माना लगाया गया, जिसे उचित न समझते हुए गुरू जी ने जुर्माना देने से इन्कार कर दिया। गुरू जी को गिरफ्तार करके लाहौर किले में बन्द कर दिया गया तथा 'यासा' कानून के तहत तसीहे देकर शहीद कर दिया गया। उन्हें कष्ट देने के लिये गर्म तवे पर बैठने के आदेश दिये गये, गर्म-गर्म तपता हुआ रेता सिर पर डाला गया तथा गर्म उबलते हुए पानी में बैठाया गया। गुरू जी का मित्र हज़रत मीयाँ मीर उन्हें मिलने आया और वह यह दृश्य देखकर बहुत दुखी हुआ। उसने कुछ करने की आज्ञा मांगी पर गुरू जी ने रज़ा में रहने का आदेश दिया।

गुरू जी को इस सारे साके का पहले से ही ज्ञान था उन्होंने सिख लहर को एक नया मोड़ देना था जिसमें रज़ा में रहने तथा जुल्म और अन्याय के विरुद्ध डट जाने की मिसाल कायम करनी जरूरी थी। जब अन्दर नाम की परमात्म शक्ति हो तो शारीरिक दुख मनुष्य का कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते। सच के लिये शहीद होने का पाठ गुरू अर्जुन देव जी ने अपनी शहीदी द्वारा दिया। ऐसा उनके अनुभव में था। इसीलिये गुरू हर गोबिन्द जी को बचपन से ही शस्त्र विद्या, घुड़सवारी, नेज़ेबाज़ी में निपुण किया था और उन्होंने गुरू जी के आदर्श की पूर्ति हित ही मीरी-पीरी की दो किरपाणें पहनीं थी, अकाल तख्त की रचना की तथा सिख संगत को शस्त्रधारी होने के आदेश दिये। इस प्रकार सिख कौम अत्याचारों का मुकाबला करने के लिये तैयार होने लगी। इस आदर्श की पूर्ति गुरू गोबिन्द सिंघ जी ने अमृत की दात द्वारा पूरी की। गुरू गोबिन्द सिंघ जी का सन्त सिपाही का स्वरूप, मीरी-पीरी के सिद्धान्त को ही व्यवहार में लाना है।

गुरू अर्जुन देव जी का प्रकाश, पिता गुरू रामदास जी तथा माता बीबी भानी जी के गृह में 15 अप्रैल 1563 ई. को गोइन्दवाल में हुआ। बीबी भानी जी तीसरे पातशाह गुरू अमर दास जी की सुपुत्री थी। गुरू अर्जुन देव जी, गुरू रामदास जी के सबसे छोटे साहिबजादे थे। बचपन से ही उच्च वृत्ति के मालिक होने तथा धार्मिक कार्यों में प्रवृत्ति रहने के कारण आप जी को पिता गुरू का विशेष प्यार प्राप्त था। इससे बड़े भाई पृथी चन्द को आप से ईर्ष्या होने लग गई, उसे भय था कि गुरू पिता की कृपा का पात्र होने के कारण छोटा भाई गुरूगद्दी का वारिस न बन जाये। बड़ा पुत्र होने के नाते वह इसे अपना अधिकार समझता था पर गुरू घर में गुरू का चुनाव सच की कसौटी पर परख कर किया जाता रहा है।

आप जी की योग्यता को ध्यान में रखते हुए पहली सितम्बर 1581 ई. को आप जी को पाँचवा गुरू स्थापित किया गया। आप जी ने गुरू नानक साहिब द्वारा संचालित किये निर्मल पंथ को हर पक्ष से मज़बूत तथा स्व निर्भर बनाया। एक और दरबार साहिब अमृतसर की सम्पूर्णता करके सिख संगत को एक नया धार्मिक केन्द्र प्रदान किया, दूसरी ओर गुरू ग्रन्थ साहिब का सम्पादन करके, गुरू विरासत की न केवल रक्षा की बल्कि सिख संगतों को गुरबाणी के साथ जोड़ने का प्रयास किया। साथ ही अपने शबद कीर्तन की इलाही दात सिख संगतों को प्रदान की और स्वंय उन्हें कीर्तन करने का उत्साह दिया। अमृतसर शहर को हर पक्ष से उजागर करने के लिये व्यापारियों, किसानों तथा मेहनती कारीगरों को काम, रोज़गार में साहस बन्धाया तथा धन सम्बन्धी सहायता भी की। धार्मिक कार्यों की सहुलियत हेतु आप जी ने दसबन्ध की प्रथा शुरू की जिससे सिख संगठन आर्थिक पक्ष से भी मज़बूत हुआ। मानवता की भलाई के लिये कार्य आरम्भ किये। तरन तारण साहिब में भयानक रोगियों तथा कोढ़ियों के इलाज का विशेष प्रबन्ध किया। छेहरटा साहिब तथा अन्य स्थानों पर कुएं खुदवा कर पानी की कमी को दूर किया।

आप जी की सबसे श्रेष्ठ देन गुरू ग्रन्थ साहिब जी का सम्पादन है जो सिख संगतों की भक्ति भावना का केन्द्र सिद्ध हुआ। 6000 शब्दों के इस संग्रह में, पहले पाँच गुरू साहिबान की बाणी के अतिरिक्त, पन्द्रह अलग-अलग मत मतान्तरों के भक्तों तथा मुस्लिम सूफी फकीर बाबा फरीद जी की बाणी शामिल की गई है बाद में नौवें पातशाह की बाणी सम्मिलित की गई। यह सर्व सांझापन तथा मानवीय भाईचारे की एकता का प्रतीक था। इससे यह भी सिद्ध होता है कि अर्जुन देव जी मध्यकालीन भारतीय धार्मिक साहित्य के प्रमुख ज्ञाता थे

तथा भिन्न-भिन्न संस्कृतियों, लोक धाराओं, परम्पराओं तथा अलग-अलग भाषाओं का भी पूरा-पूरा ज्ञान रखते थे। 16 अगस्त 1604 ई. को बड़ी धूमधाम के साथ गुरूद्वारा रामसर से दरबार साहिब में सजी हुई पालकी में गुरू ग्रन्थ साहिब जी को ले जाया गया और हरिमन्दिर साहिब में पहला प्रकाश हुआ बाबा बुड्डा जी को पहला ग्रन्थी बनाया गया तथा गुरू महाराज स्वंय चंवर झुलाते रहे। प्रकाश करने से पहले हुक्मनामा यह बख्शीश हुआ -

सूही महला ५
संता के कारजि आपि खलोइआ
हरि कंमु करावणि आइआ राम।
धरति सुहावी तालु सुहावा
विचि अंम्रित जलु छाइआ राम।
अंम्रित जलु छाइआ पूरन साजु कराइआ
सगल मनोरथ पूरे।
जै जैकारु भइआ जग अंतरि लाथे सगल विसूरे।
पूरन पुरख अचुत अबिनासी जसु वेद पुराणी गाइआ।
अपना बिरदु रखिआ परमेसरि नानक नामु धिआइआ॥

***अंग** - 783*

गुरू ग्रन्थ साहिब में सिख गुरूओं, हिन्दू भक्तों, मुसलमान फकीरों की बाणी सम्मिलित होना परम्पराई लोगों में एक अजीब घटना थी। यहाँ तक कि मुगल सुलतान अकबर के पास शिकायत की गई कि इस ग्रन्थ में दूसरे धर्मों की तौहीन की गई है। उस समय बादशाह बटाला में ठहरे हुए थे और उसने गुरू जी से इसके बारे में पूछताछ की। गुरू महाराज ने बाबा बुड्डा जी तथा भाई गुरदास जी द्वारा गुरू ग्रन्थ साहिब की बीड़ दर्शनों हित भेजी। बीड़ खोली गई तथा बादशाह अकबर के संकेत पर अलग-अलग पृष्ठों से शबद पढ़े गये। हर शबद में परमात्मा की सिफत सालाह का प्रसंग सुनकर अकबर बहुत खुश हुआ और उसने 51 मोहरें रखकर शीश झुकाया। उसने बाबा बुड्डा जी तथा भाई गुरदास जी को खिलतां दीं तथा गुरू जी के लिये आदरमान में खिलत भेजी। इससे पहले नवम्बर 1598 में अकबर गोइन्दवाल साहिब में गुरू जी के दर्शन करने तथा उनसे आत्मिक सेध लेने के लिये आया था। जब अकबर ने गुरू जी की सेवा का ध्यान किया तो आपने पंजाब का मालिया माफ करने के लिये कहा जो 10-12% माफ कर दिया गया।

गुरू जी स्वंय हर समय परमात्मा की कृपा तथा वाहिगुरू प्यार में मखमूर रहते थे। यह बात उनकी बाणी से भली भान्ति प्रकट होती है। गुरू ग्रन्थ साहिब का लगभग तीसरा भाग 2000 शब्द आप जी की ही रचना है जिनमें प्रभु प्यार की तरंगें, प्रभु मिलाप के अनूठे अनुभव, प्रभु दर्शन की व्याकुलता, गुरू तथा सिख का परस्पर प्यार छलकता है। यह बाणी सारी मानवता को प्रभु प्यार के साथ जोड़ती है तथा स्नेहपूर्ण नये मानवीय भाईचारे का संकल्प पेश करती है, जिसमें कोई ऊच-नीच, जातपात, अमीरी-गरीबी रंग रूप का भेद नहीं जो, 'सभे साझीवाल सदाइनि तूं किसै न दिसहि बाहरा जीउ' की भावना दृढ़ करवाती है, आप जी की सु-प्रसिद्ध रचना सुखमनी साहिब को संसार की अनेक बोलियों में लिप्यातंरित किया गया है तथा इसे संसार की सर्वोत्तम श्रेष्ठ बाणी माना गया है।

इस प्रकार गुरू अर्जुन देव जी के सारी मानवता हित प्यार तथा सेवा के कारण सिख लहर गुरू महाराज जी के समय में बहुत प्रफुल्लित हुई। फारसी रचना दबसताने मज़हब में लिखा है कि हर गुरू व्यक्ति पंगत संगत तथा बाणी द्वारा सिखी में वृद्धि करते रहे पर गुरू अर्जुन देव जी के समय में कोई ऐसा शहर नहीं था जहाँ सिख संगत न हो। बाद में आप जी का हरमन प्यारापन ही शहीदी का कारण बना। जब राज्य की बाग डोर झूठे व्यक्तियों के हाथों में आ जाती है तो वे सच के प्रकाश को सहन नहीं कर सकते। उनके झूठ का अन्धेरा सच की रोशनी में फैल नहीं सकता। इसलिये वे सच के मार्ग को, झूठ की दुकान कहकर हमेशा के लिये समाप्त कर देने का निर्णय ले लिया करते हैं।

जितना महान किसी का सच्चा एवंम पवित्र व्यक्तित्व होता है, उतना ही अधिक उस व्यक्तित्व की कुर्बानी की लोगों के मनों पर प्रतिक्रिया होती है। गुरू अर्जुन देव जी स्वंय परमात्म स्वरूप थे, आप जी सेवा, सिमरण, सहनशीलता तथा परमात्मा की रज़ा को मानने वाली महान हस्ती थे। आप जी ने सारी मानवता को सच्चा जीवन जीने का मार्ग बताया तथा अपनी शहीदी द्वारा सच के लिये कुर्बान हो जाने की नींव रखी। भाई गुरदास जी आपके व्यक्तित्व को निम्नलिखित पौड़ी में व्यान करते हैं -
रहिदे गुर दरीआउ विचि मीन कुलीन हेतु निरबाणी।
दरसनु देखि पतंग जिउ जोती अंदरि जोति समाणी।
सबदु सुरति लिव मिरग जिव
भीड़ पई चिति अवरु न आणी।
चरण कवल मिलि भवर जिउ

(शेष पृष्ठ 54 पर)

गुरवाणी अर्थ भण्डार

सन्त हरी सिंह जी 'रन्धावे वाले'

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक मार्च, पृष्ठ - 47)

सिरीरागु महला ३

घर ही सउदा पाईऐ अंतरि सभ वथु होइ॥

हे बन्धु! घर = गृहस्थ में रहते हुए ही यह गुरसिक्खी का पौधा पाईऐ = प्राप्त किया जा सकता है, अथवा गुरू के सत्संग रूपी घर में से ही नाम रूपी सौदा प्राप्त किया जा सकता है, अथवा मनुष्य जन्म रूपी घर में रहते हुए ही प्रभु प्राप्ति रूपी सौदा प्राप्त किया जा सकता है अर्थात अन्य योनियों में यह प्राप्ति नामुमकिन है। अतः अन्तःकरण रूपी घर से अन्दर से ही सभ = समस्त शुभ गुण रूपी वधु = वस्तुएँ प्राप्त होइ = होती हैं।

खिनु खिनु नामु समालीऐ गुरमुखि पावै कोइ॥

इसलिए हे भाई! वाहिगुरू जी के नाम की प्रतिक्षण सम्भाल करनी चाहिए लेकिन इस नाम की दात को कोई विरला ही गुरू-कृपा द्वारा प्राप्त कर सकता है।

नामु निधानु अखुटु है वडभागि परापति होइ॥

हे बन्धु! वाहिगुरू जी के नाम का निधानु = खजाना, अखुटु = कभी भी समाप्त नहीं होने वाला है लेकिन यह खजाना वडभागि = ऊँचे भाग्यों की बदौलत ही प्राप्त हो पाता है अथवा इस खजाने को प्राप्त करके ऊँचे भाग्यों की बदौलत ही मान व प्रतिष्ठा प्राप्त होती है।

मेरे मनि तजि निंदा हउमै अहंकारु॥

ऐ मेरे मन! किसी के गुण या अवगुणों को देख कर निन्दा करनी छोड़ दो तथा हउमै यानि कि देह का अहंभाव, विद्या का, अपने गुणों का, धन-सम्पत्ति का और सुन्दरता आदि का अहंकार का भी तजि = त्याग कर दो।

हरि जीउ सदा धिआइ तू
गुरमुखि एकंकारु॥ रहाउ॥

हे भाई! तुम्हारे अवगुण तभी दूर हो पाएँगे यदि तुम सदा = सदैव हरि जी या अकालपुरुष जी की अराधना करोगे। उस परमात्मा की आराधना कैसे करें? हे भाई! गुरुमुख होकर अथवा गुरुमुखजनों की संगत करके ही उस अद्वैत वाहिगुरू जी का सिमरन करो।

गुरमुखा के मुख उजले गुर सबदी बीचारि॥

गुरुमुखजनों के मुख लोक और परलोक में उजले-उज्ज्वल है क्योंकि उन्होंने गुरू के शबद की विचार की है अथवा वे गुरु-शबद द्वारा अथवा गुरु-शबद की विचार करने वालों की विचार करते हैं।

हलति पलति सुखु पाइदे जपि जपि रिदै मुरारि॥

वे हलति = इस लोक में आत्म-सुख को तथा पलति = परलोक में मोक्ष सुख को पाते हैं क्योंकि वे मुरारि = मुर राक्षस के वैरी, भावार्थ परमात्मा को रिदै = हृदय में, वाणी करके भी तथा मन करके भी जपते हैं।

घर ही विचि महलु पाइआ गुर सबदी वीचारि॥

हे भाई! उन गुरमुखों ने घर के बिचि = अन्दर भाव गृहस्थी होकर या घर परिवार में रहते हुए भी प्रभु जी को महलु = टिकाने को प्राप्त कर लिया है अथवा सतगुरू जी के संगत रूपी घर द्वारा ही महलु = तुरिया पद को प्राप्त कर लिया है अथवा शरीर रूपी घर में से ही प्रभु जी के महलु = स्वरूप को प्राप्त कर लिया है।

सतगुर ते जो मुह फेरहि मथे तिन काले॥

हे भाई! जो बेमुख लोग सतगुरू की तरफ से अपना मुँह फेर लेते हैं, उनके माथे = मस्तिष्क काले = कलंक युक्त हो जाते हैं अथवा उनके अन्तःकरण रूपी माथे अथवा हृदय रूपी माथे विकारों की मैल के कारण काले हो जाते हैं, भावार्थ सतगुरू जी से बेमुख होने वाले प्रभु जी से बिछुड़े हुए पापों के भागी बनते हैं, अर्थात गुरू से बेमुख होना बहुत बड़ा पाप है।

अनदिनु दुख कमावदे; नित जोहे जम जाले॥

वे अनदिनु = प्रतिदिन या दिन-रात दुखदाई कर्म ही करते हैं और उन्हें यमदूत नित = प्रतिदिन अपनी फाही लेकर ही जोहे = देखता है अर्थात ढूँढ़ता है, भावार्थ जिस प्रकार से पुलिस वाले अपराधी की तरफ हमेशा नजर रखते हैं, उसी प्रकार से यमदूत उन्हें प्रतिक्षण अपनी फाही में फँसाने के लिए मौके की तलाश में रहता है।

सुपनै सुखु न देखनी बहु चिंता परजाले॥

वे कभी सपने में भी सुख प्राप्त नहीं कर पाते हैं और अत्यधिक चिन्ता में पड़ने के कारण वे चिन्ता रूपी अग्नि में परजाले = विशेष रूप से जलाए जाते हैं।

सभना का दाता एकु है आपे बखश करेइ॥

हे भाई! सभना = समस्त जीवों का स्वामी केवल एक प्रभु ही है जो स्वयं ही जीवों के ऊपर अपनी कृपादृष्टि करेइ = करता है भावार्थ सत्संगत के साथ मिलाप करवाने व नाम सिमरन एवं सेवा की कृपा करता है और वही बड़ा दाता है।

कहणा किछू न जावई जिसु भावै तिसु देइ॥

उस परमात्मा को किछू = किसी भी प्रकार का हुक्म नहीं किया जा सकता है, जिस किसी व्यक्ति की श्रद्धा-भावना उसे रुचिकर प्रतीत होती है तिसु = उसी को वह नाम, ज्ञान आदि बहुमूल्य उपहारों से मालामाल कर देता है।

नानक गुरमुखि पाईऐ आपे जाणै सोइ॥

सतगुरू जी फुरमान करते हैं कि गुरुमुखजनों की संगत करके अथवा गुरुमुख होकर उसके पास से नाम व ज्ञान प्राप्त किया जाता है तथा सोइ = उन गुरुमुखजनों को वह परमात्मा स्वयं ही जानता है अथवा वे गुरुमुखजन उस प्रभु जी के स्वरूप को स्वयं भी जान लेते हैं।

सिरीरागु महला 3

सचा साहिबु सेवीऐ सचु वडिआई देइ॥

हे भाई! जो सचा साहिबु = सबका मालिक वाहिगुरू है, उसकी भक्ति द्वारा अराधना करनी चाहिए और जब वह व्यक्ति विशेष की भक्ति-भावना पर प्रसन्न हो जाता है तो वह जीवों को शुभ गुणों के द्वारा मालामल कर देता है जो कि कभी भी समाप्त नहीं होते हैं।

गुर परसादी मनि वसै हउमै दूरि करेइ॥

जब परमात्मा गुरू जी की कृपा द्वारा गुरुमुखजनों के मनि में बस जाता है और अपनी कृपा द्वारा गुरमुखजनों की हउमै = अहंभाव को दूर कर देता है तो फिर जीव की सच्ची प्रशंसा प्राप्त होती है।

इहु मनु धावतु ता रहै जा आपे नदरि करेइ॥

हे भाई! यह जो मन हमेशा माया के पीछे धावतु = दौड़ता फिरता है, यह तो तभी स्थिति रहै = रह सकता है भावार्थ टिक सकता है जबकि वह वाहिगुरू जी स्वयं सतगुरू जी के माध्यम से स्वयं अपनी नदरि करेइ = कृपा दृष्टि कर दे।

भाई रे गुरमुखि हरि नामु धिआइ॥

भाई रे = हे भाई! गुरुमुखजनो की संगत द्वारा हरि नामु = प्रभु जी के नाम का सिमरन करें।

नामु निधानु सद मनि वसै
महली पावै थाउ॥1॥रहाउ॥

जब सद = प्रत्येक समय नामु निधानु = नाम का खजाना तुम्हारे मनि वसै = मन में बस जाएगा तब तुम महली = सचखण्ड रूपी महल अथवा स्वरूप अथवा तुरिया पद रूपी थाउ = टिकाने को प्राप्त कर लोगे।

मनमुख मनु तनु अंधु है तिस नउ ठउर न ठाउ॥

हे भाई! मनमुख पुरुष विष-वासना के कारण मानसिक तौर पर तथा अशुभ कर्मों के कारण शारीरिक तौर पर अन्धा होता जा रहा है, भावार्थ अज्ञानी होकर कर्म कर रहा है, यही कारण है कि उसे न तो इस लोक में कोई टिकाना मिल पाता है और न ही परलोक में कोई जगह मिल पाती है अथवा न ही इसे दोबारा मनुष्य शरीर रूपी जगह मिल पाती है और न ही बैकुण्ठ रूपी जगह ही प्राप्त हो पाती है।

बहु जोनी भउदा फिरै जिउ सुंञै घरि काउ॥

फिर वह बहुत सारी योनियों में भउदा = भटकता फिरै = फिरता है। जिस प्रकार से सुंझै = निर्जन घर में कौवा काँव-काँव करते हुए दुखी होकर लौट जाता है और उसे कुछ भी प्राप्त नहीं हो पाता है, उसी प्रकार से वह मनमुख पुरुष, शरीर रूपी घर में दुखी होता हुआ चला जाता है, भावार्थ सेवा व सिमरन जैसे पदार्थों के तौर पर खाली चला जाता है।

गुरमती घटि चानणा सबदि मिलै हरि नाउ॥2॥

जिनके हृदयों में (गुर+मती) गुरू की शिक्षा बसी हुई है, उनके हृदयों में ज्ञान रूपी प्रकाश हो जाता है। वे गुरू जी के शबद के साथ मिले हैं और जिसके फलस्वरूप उन्हें प्रभु जी के नाम की प्राप्ति होती है अथवा वे हरि = प्रभु जी के नाम के कारण शबद द्वारा ब्रह्म में अभेद हो जाते हैं।

त्रै गुण बिखिआ अंधु है; माइआ मोह गुबार॥

हे बन्धु! यह जो तीन गुणों (रजो, तमो और सतो) वाली विषतुल्य माया है, अज्ञानी जीव इसके मोह में फँस कर अन्धे हो रहे हैं, भावार्थ कोई धन के लोभ में फंसा हुआ है, कोई पदार्थों के सुखों की इच्छा में फँसा हुआ है, कोई अपने अधिकाधिक चेले बनाकर प्रशंसा की भूख की पूर्ति में लगा

(शेष पृष्ठ 54 पर)

वारां भाई गुरदास
स्टीक

डा. भाई वीर सिंह जी

17. पउड़ी (जुगगरदी)

जुग गरदी जब होवहे उलटे जुगु किआ होइ वरतारा।
उठे गिलानि जगति विचि वरते पाप भ्रिसटि संसारा।
वरनावरन न भावनी खहि खहि जलन बाँस अंगिआरा।
निंदिआ चले वेद की समझनि नहि अगिआनि गुबारा।
बेद गिरंथ गुर हरि है जिसु लगि भवजल पारि उतारा।
सतिगुर बाझु न बुझीऐ जिचचु धरे न प्रभु अवतारा।
गुर परमेसरु इकु है सचा साहु जगतु वणजारा।
चड़े सूर मिटि जाइ अंधारा।

युगों की बदली जब होने लगती है तो फिर युग पलट जाता है, फिर किस प्रकार का प्रभाव पड़ता है? आगे उत्तर देते हैं कि उस समय फिर सारे संसार में ग्लानि व वैर भाव समाप्त हो जाता है। चहुँओर पाप का वातावरण हो जाता है तथा सारा संसार भ्रष्टाचारी हो जाता है। फिर एक वर्ण को दूसरा वर्ण अच्छा नहीं लगता है। बासों के पेड़ों की भांति लोग आपस में ही रगड़ खा-खाकर मरने लगते हैं। परमात्मा के ज्ञान की लोग निन्दा करते हैं और अज्ञान के अन्धकार में कोई किसी को कुछ भी नहीं समझता है। वेद क्या है? वेद गुरू की हाट का ग्रन्थ है अथवा गुरू के उपदेश जिस में लिखे हों वही वेद है। जिसके सहारे से भक्त जन पार हो सकते हैं वही वेद है। सच्चे गुरू के बिना समझ नहीं आ पाती है और गुरू तब तक नहीं मिल पाता है जब तक कि गुरू स्वयं अवतार धारण न करे। गुरू और परमात्मा एक ही रूप हैं तथा गुरू शाह है एवं जगत व्यापारी है। जिस प्रकार से जब सूर्योदय होता है तो फिर अन्धेरा मिट जाता है, उसी प्रकार से जब गुरू प्रकट होता है तो फिर अज्ञान का अन्धकार दूर हो जाता है।

18. बौद्ध मत

कलिजुगि बौधू अउतार है बोध अबोधु न द्रिसटी आवै।
कोइ न किसै वरजई सोई करे जोई मनि भावै।
किसे पूजाई सिला सुंनि कोई गोरी मड़ी पुजावै।
तंत्र मंत्र पाखंड करि कलहि क्रोधु बहु वादि वधावै।
आपे थापी होइकै निआरे निआरे धरम चलावे।
कोई पूजै चंदु सूरु कोई धरति अकासु मनावै।
पउणु पाणी बैसंतरो धरमराज कोई त्रिपतावे।
फोकटि धरमी भरमि भुलावै।

कल्युग के अन्दर बौद्ध का अवतार हुआ लेकिन ज्ञान और अज्ञान में फर्क कहीं पर दिखाई नहीं पड़ता है। कोई किसी को किसी भी बुरे कार्य को न करने के लिए नहीं कहता है और प्रत्येक व्यक्ति वही कार्य करता है जो कि उसके मन को अच्छा लगता है, भावार्थ ज्ञानवानों को तो ईश्वरीय रजा में चलना चाहिए लेकिन ये लोग मन की मति के पीछे ही

चलते हैं। कोई जड़ शिला की पूजा करता है तथा कोई किसी कब्र और समाधि की पूजा करता है, जैसे कि बुद्ध जी की मूर्तियाँ उनके स्थानों व मठों आदि की पूजा की जाती है। कई लोग अभिमन्त्रित ताबीजों आदि का पाखण्ड करते हैं। झगड़ा, गुस्सा व वितण्डावाद खूब बढ़ गया है, बौद्ध लोग इस प्रकार के वहमों में अब प्रवृत्त हो चुके हैं। अपने-अपने स्वार्थों के मद्देनजर अपने धर्म प्रचलित किए जा रहे हैं। बौद्ध धर्म के अलावा भी अनेकों मत अब प्रचलित हो चुके हैं। कोई चन्द्रमा की पूजा करता है और कोई सूर्य की पूजा करता है, कोई धरती या आकाश के देवताओं को रिझाने की कोशिशों में लगा हुआ है। दित्य नाथ, आदित्यनाथ, सम्भव नाथ, पारस तथा अरिहन्त आदि चौबीस अवतार गए हैं। कोई हवा को, पानी को, कोई आग को तथा कोई यमराज को ही प्रसन्न करने में लगा हुआ है। इस प्रकार से सभी तथाकथित धार्मिक लोग भ्रम के अन्दर ही भूले हुए हैं।

भावार्थ - बौद्ध लोग मनमति की बातों के बारे में ही कहते हैं और वे वाहिगुरू जी को नहीं मानते हैं, इसलिए वे बोध वाले कहाँ से हो गए बल्कि वे तो अबोध वाले ही हैं। फिर जो पत्थर की पूजा के अवगुण हैं, उसे सभी बौद्ध लोग करते हैं। इस प्रकार जो सूर्य आदि की पूजा करने वाले मत हैं, ये सब निरर्थक कर्म हैं। भाई साहिब जी यहाँ पर ग्लानि का रूप दिखला रहे हैं।

इस प्रकार से पहले भाई साहिब भाई गुरदास जी उन मतों के बारे में बतला रहे हैं जो कि परमात्मा के अस्तित्व से ही मुनकर नास्तिक या जड़ पूजा वाले हैं और अब आगे वे अन्य मतों की चर्चा करेंगे।

19. भिक्खू निर्णय

भई गिलानि जगत विचि चारि वरन आस्रम उपाए।
दस नामि संनिआसीआँ जोगी बारह पंथि चलाए।
जंगम अते सरेवड़े दगे दगंबरि वादि कराए।
ब्रहमणि बहु परकारि करि सासत्रि वेद पुराणि लड़ाए।
खटि दरसन बहु वैरि करि नालि छतीसि पखंड रलाए।
तंत मंत रासाइणा करामति कालखि लपटाए।
इकसि ते बहु रुपि करि रुप कुरुपी घणे दिखाए।
कलिजुगि अंदरि भरमि भुलाए।

संसार के अन्दर अत्यन्त ग्लानि उठ खड़ी हुई और वे एक दूसरे का नाक काटने लग पड़े। अब चार वर्ण (क्षत्रिय, ब्राह्मण, वैश्य और शूद्र) तथा चार आश्रम (ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ तथा सन्यास) उत्पन्न हो गए। सन्यासियों ने दस नाम (गिरि, पूरी, भारती, सरस्वती, दण्डी, आरण्य आदि) तथा योगियों ने बारह पन्थ चला दिए। जंगम, सरेवड़े तथा दिगम्बर (जैनियों) ने दंगे तथा वाद रचा दिए। ब्राह्मणों ने बहुत प्रकार के शास्त्र, वेद, पुराण आदि आपस में ही लड़वा दिए भावार्थ चर्चावाद करके बतलाने लगे और इसलिए सारग्राही न रह सके। छः शास्त्रों (न्याय व वेदान्त आदि) का पारस्परिक विवाद शुरू हो गया और उन्होंने नाना प्रकार के पाखण्ड मिला दिए। शनैः-शनैः वे ताबीजों, धागों, मन्त्रों, रसायनों तथा करामातों की कालिख से मलिन हो गए। एक रूप की बजाए बहुत सारे रूप बनाकर उन्होंने भले-बुरे रूपों का वर्णन शुरू कर दिया यानि रासें आदि डालने लग पड़े। इन सबका परिणाम यह हुआ कि कल्युग के अन्दर लोग बहुत प्रकार से भ्रमित हो गए।

भावार्थ - उपर्युक्त विचार के अन्दर भाई साहिब भाई गुरदास जी ने हिन्दुओं तथा जैनियों के मत-मतान्तरों के झगड़ों व विवादों का वर्णन करते हुए उनसे ग्लानि का एक अन्य स्वरूप यह बताया है कि ये लोग वाहिगुरू जी के सिमरन, सदाचार तथा प्रेमा भक्ति के स्थान पर मतभेदों और क्लह क्लेशों से ग्रसित हो गए। अब आगे आप ग्लानि का एक और रूप कथन करते हैं।

'चलता'

स्वामी राम जी के प्रेरणात्मक विचार
(Inspired Thoughts of Swami Ram)

डा. स्वामी राम जी

अनुवादक - शमशेर सिंह 'कोमल', एम. ए., एम. फिल.

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक मई, पृष्ठ - 54)

मन्त्र, शान्त होने का मार्ग

तुम्हें इस प्रकार की परिस्थितियाँ उत्पन्न करनी चाहिए जिनके द्वारा मन शान्त हो जाए, शान्त रहे। शान्त का तात्पर्य है कि कोई भी इच्छा न रहे। वास्तव में तुम्हें प्रत्येक प्रकार की चिन्ता को 'न' करनी सीखनी चाहिए। तुम्हें सभी प्रकार की इच्छाओं को न करनी सारी कमजोरियों तथा सभी प्रकार की लोभ भावनाओं का 'न' करनी चाहिए। तुम्हें उन सबको यह कहना चाहिए कि तुम अभी मुझे छोड़ो मैं बाद में तुम्हें देखूँगा। मैडिटेशन करने से पहले यह दृढ़ता अत्यावश्यक है। यदि तुम ऐसा नहीं करोगो तो जब तुम मैडिटेशन के लिए बैठोगे तो उस समय तुम्हारी सारी इच्छाएँ तुम्हारे मन को घेर लेंगी। सहज में तो तुम वैसे खुश हो, ठीक हो लेकिन जब तुम मैडिटेशन के लिए बैठोगे तो उस समय तुम्हें वे सारी चीजें याद आ जाएंगी जिन्हें कि तुम करना चाहते थे अथवा जिन कार्यों का हमने करना था।

ऐसा इसलिए होता है क्योंकि अब तुम अपनी याददाश्त को अपने स्वयं के नजदीक होकर देख रहे हो, लेकिन यदि तुम चुप करके बैठ जाओ, अपने मन्त्र को करते रहो तो तुम देखोगे कि तुम मन को व्यस्त रख सकते हो। इस व्यस्तता में ही तुम धीरे-धीरे शान्त हो जाओगे, भले ही तुम चेतनता के तल पर स्वयं को शान्त महसूस न करो। मन्त्र करने से तुम अर्द्धचेतन मन के तल पर स्वयं को शान्त महसूस करोगे। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि तुम लगातार अर्द्धचेतन मन पर मन्त्र का प्रभाव डालते जा रहे हो। इस प्रकार से मन्त्र का जप करने से, मन्त्र को शक्तिशाली करने से, तुम मन को शक्तिशाली कर रहे हो, मन को तैयार कर रहे हो ताकि जब तुम्हें जरूरत पड़े, तो उस समय तुम्हारा मन, तुम्हारी सहायता कर सके। यह सबसे आवश्यक चीज है जो कि तुम्हारे अन्दर है लेकिन यह तुम्हारे पास उसी समय आएगी जब तुम अकेले होगे। अतः यह हमारा सर्वोत्तम मित्र है, दोस्त है।

मन्त्र बिल्कुल उस स्त्री के समान है जो कि पर्दा करके रखती है। स्त्री पर्दा इसलिए करके रखती है क्योंकि वह नहीं चाहती है कि सारे लोग उसे देख सकें। वह तो चाहती है कि केवल उसका प्यारा ही उसे देखे। मन्त्र बिल्कुल इस तरह से ही है। जो लोग मन्त्र के बारे में नहीं जानते हैं, उनके लिए मन्त्र बिल्कुल ही व्यर्थ है। वैसे मन्त्र दूसरों के लिए है भी नहीं क्योंकि तुम्हारा मन्त्र केवल तुम्हारे लिए ही है। जिसे मन्त्र दिया जाता है, उसके लिए वह अत्यन्त शक्तिशाली है। अतः पर्दा दूसरों के लिए है, तुम्हारे लिए नहीं। वास्तव में तुम्हें मन्त्र का जप प्रत्येक समय करके तथा मन्त्र को सिद्ध करके, उसका पर्दा हटा लेना चाहिए। मन्त्र का जप इतना करो कि वह तुम्हें जीवन की गहराई और आत्म मार्ग की गहराई तक ले जाए। पहले मन्त्र को जीभ के द्वारा करो, फिर उसे श्वासों के द्वारा करो और उसके बाद मन में करो तथा उसके पश्चात तुम्हारा सारा शरीर उस मन्त्र को सुने। इस प्रकार से उस मन्त्र को सुनो जैसे कि तुम्हारा सारा शरीर ही कान है और तुम्हारे सारे ही अंग मन्त्र को सुन रहे हैं। यह अवस्था, कोई बहुत ऊँची अवस्था नहीं मानी जाती है। सबसे ऊँची अवस्था तो वह है जिस समय मन्त्र, मन के अन्दर रच जाए, लीन हो जाए और अन्त में वह मन्त्र आनन्द का सागर बन जाता है। अब मन केवल मन्त्र में ही रचा रहता है, समाया रहता है।

शुरू-शुरू में मन्त्र तुम भूल जाते हो और मन कहीं अन्यत्र भटक जाता है लेकिन जब मन्त्र परिपक्व हो जाता है और जब तुम्हें मन्त्र की झन-झनाहट पहुँचने लग जाती है तो फिर तुम्हें अन्दर से मन्त्र का प्रभाव महसूस होने लग पड़ता है और तुम्हारा सारा अस्तित्व ही मन्त्र में समा जाता है। फिर तुम बिल्कुल अलग रूप में परिवर्तित हो जाते हो। फिर तुम्हें अपने अन्दर की शक्ति को जान लेना चाहिए। यहाँ पर एक बात हमेशा ही याद रखने वाली है कि इस मन्त्र की शक्ति या गुरू की शक्ति के कारण कभी भी हउमै में मत आओ। कभी भी तुम्हारे अन्दर हउमै नहीं आनी चाहिए बल्कि उस शक्ति के द्वारा तुम्हारा व्यक्तित्व परिवर्तित हो जाना चाहिए। इसी परिवर्तन को परमात्मा की शक्ति कहते हैं, इसी को प्रभु-कृपा या गुरू-कृपा कहते हैं। ज्यों-ज्यों तुम अन्तर्मुखी

होते जाते हो, तुम्हारा मन और अधिक सूक्ष्म होता जाता है। धीरे-धीरे तुम्हें पता लगेगा कि तुम्हारे अन्दर वह केन्द्र है जो कि तुम्हें शान्ति प्रदान करता है।

समाज के अन्दर स्त्रियों की भूमिका - मैं आज की स्त्रियों को याद करवाना चाहता हूँ कि वे अपनी पदवी को भूल गई हैं और आज हम बहुत ही कठिन समय में से गुजर रहे हैं। वास्तव में हम सभ्यता का वह रूप देखना चाहते हैं जिसमें हम सभी इकट्ठे होकर प्यारपूर्वक रहें। इससे वंचित कोई भी न रहे लेकिन हो यह रहा है कि इस खोज में स्त्री अपने अन्दर की शक्ति को भूलती जा रही है, जिस कारण से वह अपनी अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका, जो उसने निभानी है, भी भूलती जा रही है। यदि स्त्री अपनी इस भूमिका को नहीं निभाती है तो कहीं भी खुशी नहीं हो सकती है। यदि स्त्रियाँ समाज के अन्दर बदलाव लाना चाहती हैं तो बिल्कुल ही ला सकती हैं। स्त्री ही तो समाज की निर्माता है और इतना ही नहीं बल्कि वही तो मानवता की प्रारब्ध है। स्त्री घर बनाती है, परिवार की संस्था को स्थापित करती है, बच्चों को पालती है तथा उन्हें एक अच्छा नागरिक बनाती हैं।

क्या तुम जानते हो कि सबसे पहले काम करते हुए मैडिटेशन किसने सिखलाई? आप कह सकते हो बुद्ध जी ने, ईसा जी ने, श्री कृष्णा जी ने सिखाई है लेकिन वास्तव में मैडिटेशन की संस्थापक और मुखी स्त्रियाँ ही हैं। प्राचीन समय में जब स्त्रियाँ कुएँ में से पानी भरने जाती थीं तो वे एक दूसरे के साथ बातचीत करतीं, गातीं, गप्पें मारतीं और जब वे वापिस लौटतीं तो इनके सिर के ऊपर एक घड़ा रखा होता और एक घड़ा बाँह से पकड़ा हुआ होता था। वे सिर वाले घड़े को हाथ से नहीं पकड़ती थीं। ऐसा करने के लिए तुम्हें पूरी-पूरी एकाग्रता की जरूरत है, पूरे नियन्त्रण की जरूरत है। इस प्रकार का कार्य कोई पहुँचा हुआ योगी ही शायद कर सकता है। वह घड़ों को इस प्रकार से ले जाते हुए बातें भी करती हैं, हँसती भी हैं, लेकिन उसके घड़े हिलते नहीं हैं। वास्तव में यह मैडिटेशन ही तो है। ठीक इसी प्रकार से तुम संसार में रहते हुए भी उन सबसे निर्लिप्त रह सकते हो, बिल्कुल उसी प्रकार से जैसे कि वह महिला घड़ों को ले जाते हुए बातचीत करती व हँसती हुई जाती है लेकिन उसकी एकाग्रता पूरी तरह से बनी रहती है।

स्त्री - एक शक्ति

स्त्री के बिना पुरुष अधूरा है। टैगोर, जो कि बहुत बड़े कवि हुए हैं, उन्होंने लिखा है कि हे स्त्री! तुम अधूरी हो लेकिन तुम्हारा अधूरा होना एक सपना है। वह सपना जो कि प्रत्येक पुरुष का है और जिसके बिना मानवता जी नहीं सकती है। आवश्यकता है स्त्री को अपनी पदवी, अपना दर्जा, अपनी जगह समझने की। वह सपना समझाया नहीं जा सकता है। स्त्री को अपनी जगह व अपनी पदवी का पता होना चाहिए कि समाज में उसका स्थान क्या है। मैंने तो स्त्री को सदैव एक मन्दिर ही जाना है। पुरातन ग्रन्थों में यह बताया गया है कि स्त्री शक्ति के बिना मानवता के अस्तित्व का बच पाना सम्भव ही नहीं है। संसार के सारे नेताओं के पीछे स्त्री की ही शक्ति है। उदाहरण के तौर पर यदि तुम राम कृष्ण जी के जीवन को देखो व पढ़ो तो तुम जानोगे कि वे सन्त बने, ऊँचे उठे, स्त्री उनके साथ थी। इसी प्रकार से कृष्ण जी पूजे जाते हैं, राधा के कारण। बुद्ध बने, उनके जीवन में बहुत सारी स्त्रियों का योगदान है।

आज की समस्या यह नहीं है कि पुरुष ऊँचा है या स्त्री। जहाँ तक मैं देखता हूँ तो स्त्री ही पुरुष से ऊँची है। यदि पुरुष को थोड़ी सी भी तकलीफ झेलनी पड़ जाए तो वह काफी मुश्किल महसूस करता है, लेकिन स्त्री नौ महीनों तक बच्चे को पेट में रखती है, फिर उसे जन्म देती है, दर्द सहती है, वह एक प्रकार से उसका दूसरा जन्म होता है। यह केवल स्त्री ही कर सकती है, उसके अन्दर ही यह सामर्थ्य है केवल स्त्री के अन्दर ही धैर्य है, सहन-शक्ति है। स्त्री मनोवैज्ञानिक तौर पर, डाक्टरी तौर पर, मनुष्य से ऊँची है, उत्तम है। बहुत कम स्त्रियों को दिल को दौरा पड़ता है क्योंकि वह प्रत्येक दुख को, गम को अपने अन्दर ही पी जाती है। स्त्रियाँ दुखों को सह लेती हैं लेकिन आदमी को यदि एक छींक भी आ जाए, सिर में दर्द भी हो जाए तो वे बच्चे की तरह से हंगामा खड़ा कर लेते हैं।

वास्तव में स्त्री एक शक्ति है लेकिन विडम्बना यह है कि स्त्री अपनी शक्ति का सृजनात्मक प्रयोग नहीं कर रही है। आज की स्त्री अपनी शक्ति को समझ ही नहीं रही है। इसी वजह से वह दुखी है, वह अपनी शक्ति को विज्ञापनों में, टी.वी. में, सिनेमा में, मैग्जीनों में बरबाद कर रही है और सभी लोग उसका परिणाम भुगत रहे हैं। स्त्री का जीवन व्यक्ति के खिलवाड़ के लिए नहीं है लेकिन आज की बहुत सारी स्त्रियाँ इस बात को भूल गई हैं और बहुत सारी स्त्रियाँ अपनी तारीफ करवाना चाहती हैं। कोई उन्हें देखे, उनकी सुन्दरता की तारीफ करे, अरे भाई तुम्हें इस चीज की जरूरत ही क्यों है? तुम दूसरों पर निर्भर ही क्यों हो? कुछ विशेष प्रकार के कपड़े पहनने और फिर यह ख्याल करते रहना कि कोई मेरी प्रशंसा करे, तारीफ करे और कहे कि आप बहुत सुन्दर लग रहे हो। जीवन जीने का यह तरीका कोई बहुत अधिक प्रशंसा योग्य नहीं है और न ही यह आने वाली पीढ़ियों के लिए ही ठीक होगा। स्त्री एक माँ है, यह मनोवृत्ति या ऐसी निर्भरता ठीक नहीं है। यह आने वाली पीढ़ी के लिए भी ठीक नहीं है। यदि हमें मानवता के साथ प्यार है तो हमें यह अच्छी तरह से समझ लेना चाहिए।

'चलता'

(पृष्ठ 47 का शेष)

सुख संपट विचि रैणि विहाणी।
गुर उपदेस न विसरै बाबीहे जिउ आप वखाणी।
गुरमुखि सुख फलु पिरमरसु
सहज समाधि साध संगि जाणी।
गुर अरजन विटहु कुरबाणी॥

भाई गुरदास जी, वार 24/23

भट्टों ने गुरू महाराज जी की हस्ती को ब-खूबी पहचाना तथा अपने अनुभव सवैये महला पाँचवा में लिखे जिन्हें गुरू अर्जुन देव जी ने प्रवान करके, गुरू ग्रन्थ साहिब में स्थान दिया। भट्ट काल्हा के अनुसार गुरू जी ने जन्म से ही गुरू की मति द्वारा ब्रह्म को पहचान लिया था 'जन मत गुरमति ब्रहमु पछाणिओ' आप बचपन से ही पूरे आनन्द में रहते हैं, हृदय में सदा शबद बजता रहता, मणिक रूप मन में सन्तोष टिका रहता क्योंकि पिता गुरू रामदास ने जन्म से ही आपको नाम दृढ़ करवा दिया था। पारब्रह्म परमेश्वर के दर्शन करवा दिये थे -

बडभागी उन मानिअउ रिदि सबदु बसायउ।
मनु माणकु संतोखिअउ गुरि नामु द्रिड़ायउ।
अगमु अगोचरु पारब्रहमु सतिगुरि दरसायउ।।

***अंग** - 1407*

सन्तोष में विचरते, निर्मल बुद्धि वाले गुरू अर्जुन देव जी, यौनियों से रहित, स्वतः प्रकाश हरि का रूप है -

खेलु गूढ़उ कीअउ हरि राइ संतोखि समाचर्यि बिमल बुधि सतिगुरि समाणउ। आजोनी संभविअउ सुजसु कल्य कवीअणि बखाणिअउ॥ ***अंग** - 1407*

गुरू अर्जुन साहिब सद-जीवी है, आपका मूल्य नहीं जाना जा सकता, आप यौनियों से रहित स्वतः प्रकाश हरि का रूप हैं, भय दूर करने वाले, दूसरों के दुख निवारण करने वाले ज्ञान स्वरूप बेअन्त गुणों के मालिक हैं -

सद जीवणु अरजुनु अमोलु आजोनी संभउ। भय भंजनु परदुख निवारु अपारु अनंभउ॥ ***अंग** - 407*

मथरा भट्ट आप जी के व्यक्तित्व के गुणों का वर्णन करते हुए लिखता है कि गुरू अर्जुन देव जी ने सत-सन्तोष हृदय में धारण किया और हृदय में हरि को टिकाया हुआ है। ये बख्शीशें आपको धुर से ही प्राप्त हैं। आपके अन्दर हरि ज्योति जगमग-जगमग कर रही है। आपका तेज प्रताप धरती पर छाया हुआ है।

पारस गुरू का स्पर्श प्राप्त करके आप गुरू रूप हो गये। गुरू अर्जुन कलयुग के जहाज हैं। दुनियाँ के लोगों उनके चरणों में जुड़कर संसार सागर से सही सलामत पार हो जाओ-

सति रूपु सतिनामु सतु संतोखु धरिओ उरि। आदि पुरखि परतखि लिख्यउ अछरु मसतकि धुरि। प्रगट जोति जगमगै तेजु भूअ मंडलि छायउ। पारसु परसि परसु परसि गुरि गुरू कहायउ। भनि मथुरा मूरति सदा थिरु लाइ चितु मनमुख रहहु। कलजुगि जहाजु अरजुनु गुरू सगल स्रिस्टि लगि बितरहु॥ ***अंग** - 1408*

मथरा भट्ट के अनुसार जगत के इस घोर अन्धेरे में गुरू अर्जुन देव के बिना और कोई रक्षक नहीं है, उन्हें हरि ने स्वंय अवतार बनाकर भेजा है। जिन्होंने गुरू जी से नाम अमृत पीया है उनके करोड़ों दुख दूर हो गये हैं -

जग अउरु न जाहि महा तम मै
अवतारु उजागरु आनि कीअउ।
तिन के दुख कोटिक दूरि गए
मथुरा जिन्ह अंम्रित नामु पीअउ॥ ***अंग** - 1409*

अन्त में यह कहा कि गुरू अर्जुन ही ज्योति रूप होकर धरती, आकाश तथा नौ खण्डों में व्याप्त हैं। गुरू अर्जुन साक्षात अकाल पुरुष हैं, कोई अन्तर नहीं है -

धरनि गगन नव खंड महि जोति स्वरूपी रहिओ भरि।
भनि मथुरा कछु भेदु नही गुरु अरजुनु परतख्य हरि॥

***अंग** - 1409*

(पृष्ठ 49 का शेष)

हुआ है, यानि कि सभी को किसी न किसी रूप में माया की ही चाहत आकर्षित कर रही है। यह माया का मोह घने अन्धकार के रूप में छाया हुआ है।

लोभीअन कउ सेवदे पड़ि वेदा करै पुकार॥

अज्ञानी जीव लोभी बनकर, लालचों की पूर्ति हेतु इसी प्रकार की चीजों की पूजा करते रहते हैं, अथवा लोभी पुरुष अन्य चीजों की ही सेवा में लगे रहते हैं और अपने जीवन के कीमती समय को बरबाद कर लेते हैं कि अमुक व्यक्ति या सन्त मुझे पदार्थ दे देगा, धन दे देगा, प्रशंसा दे देगा अथवा वह बहुत अधिक करनी-कमाई वाला है, लेकिन वे इस बात को नहीं जानते हैं कि जिस प्रकार से हम लोग लालचवश उसकी सेवा करते हैं, उसी प्रकार से वह हमसे भी बड़ा लालची है। आप ही देख लो कि एक तरफ तो लोभी पण्डित वेदों को पढ़ते रहते हैं और साथ ही वे धन के लिए फरियादें भी करते जाते हैं।

बिखिआ अंदरि पचि मुए ना उरवारु ना पारु॥

इस प्रकार के पुरुष बिखिआ! माया के अन्दर पचि = खप-खप कर ही मर रहे हैं। यही कारण है कि न तो उनका उरवारु = इहलोक ही सुधर पाया है और न ही पारु = परलोक ही सुधर पाया है।

माइआ मोहि विसारिआ जगत पिता प्रतिपालि॥

माया के मोह में फँस कर उन्होंने उस प्रभु जी को विसरिआ = भुला दिया है जो कि सारे संसार का पिता है और सबकी पालि = पालना करने वाला है।

बाझहु गुरु अचेतु है; सभ बधी जमकालि॥

सतगुरू जी के बिना सारे जीव इस बात से अचेतु = भूले हुए ही हैं भावार्थ वे अज्ञात ही हैं कि सारी सृष्टि जमकाल के चक्रव्यूह में फँसी हुई है।

नानक गुरमति उबरे; सचा नामु समालि॥ 4 ॥ 10 ॥ 43 ॥

सतगुरू जी फुरमान करते हैं कि हे भाई! जिन्होंने गुरू की मति धारण की हुई है वे जन्म-मरण से बचे हुए हैं क्योंकि उन्होंने सच्चे प्रभु जी के नाम को समालि = याद किया है भावार्थ सिमरन किया है।

रतवाड़ा साहिब में महापुरुषों के प्रवचनों का कार्यक्रम

प्रत्येक रविवार रतवाड़ा साहिब

(12.00 बजे से 4.00 बजे तक)

पूर्णमाशी - 17 जून, दिन सोमवार।

इस माह में प्यारे महापुरुषों का जन्म दिवस होने के कारण दिन के समय में प्रातः 10 बजे से सायं 4 बजे तक विशेष गुरमति समागम होगा।

संक्रान्ति - आसाढ़ु, 15 जून, दिन शनिवार।

(प्रातः 5.30 बजे से 8.00 बजे तक)

अमृत संचार - महीने के प्रथम रविवार को गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब में सुबह 11.00 बजे होता है।

INTERNET MEDIA AND LIVE TELECAST

Website : www.ratwarasahib.in
Website : www.ratwarasahib.org
Instagram : RATWARA SAHIB (https://instagram.com/ratwara.sahib/)
You Tube : https://www.youtube.com/user/babalakhbirsingh
Facebook : https://www.facebook.com/ratwarasahib1
Twitter : https://mobile.twitter.com/ratwarasahib13
Live Audio Link 1 - https://www.awdio.com/Ratwara Sahib
Live Audio Link 2 - https://mixlr.com/ratwara-sahib
E-mail :- sratwarasahib.in@gmail.com

Contact - 9569455861, 9417912900, 9814612900

आवश्यक निवेदन

आत्म मार्ग मैगज़ीन की मैंबरशिप/रिन्यिूवल या दसवंद पंजाब एंड सिंध बैंक की किसी भी शाखा द्वारा निम्नलिखित बैंक खातों में भेजी जा सकती है।

भारत (INDIA)

आत्म मार्ग मैगज़ीन की मैंबरशिप/रिन्यिूवल भेजने के लिए -

VGRMCT / Atam Marg Magazine
S/B A/C No. 12861000000003 RTGS/IFSC Code - PSIB0021286
Branch Code - C1286

दसवंद भेजने के लिए -

Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust
SB A/C No. 12861100000005 RTGS/IFSC Code - PSIB0021286
Branch Code - C1286

विदेश (ABROAD)

Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust
Punjab National Bank, SB A/C No. 0779000100179603
RTGS/IFSC Code - PUNB0077900, SWIFT CODE - PUNBINBBMOH, Branch Code - 077900

यदि चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा राशि भेजनी हो तो ऊपरलिखित खातों अनुसार **Gurdwara Ishar Parkash Ratwara Sahib, P.O. Mullanpur Garibdas. Distt S.A.S. Nagar (Mohali) - 140901** पर भेजने की कृपा करें। यदि **Online** राशि भेजनी हो तो राशि की जानकारी देते समय अपना नाम व पूरा पता मोबाइल नं. +91-98889-10777 पर **SMS** भेजें जी।

सर्व साधारण को सूचित किया जाता है कि यदि आपने अभी तक आत्म मार्ग मासिक पत्रिका की सदस्यता ग्रहण नहीं की है तो आप कृप्या अधोलिखित प्रारूप पत्र को भरकर सदस्यता ग्रहण करने की कृपा करें। यदि आप पहले से ही सदस्यता ग्रहण कर चुके हैं, तो पुनर्नवीनीकरण हेतु इस प्रारूप पत्र के साथ आवश्यक चैक/ड्राफ्ट "VGRMCT/ATAM MARG MAGAZINE" के नाम पर प्रेषित करने की कृपा करें।

Subscription form ✓ ☐ नई सदस्यता ☐ पुनर्नवीनीकरण ☐ आजीवन सदस्यता

within India

Subscription Period	By Ordinary Post/Cheque	By Registered Post/Cheque
1 Year	Rs. 300/320	
3 Year	Rs. 750/770	
5 Year	Rs. 1200/1220	
Life	Rs 3000/3020	

	Annual	Life
U.S.A.	60 US$	600 US$
U.K.	40 £	400 $
Europ	50 Euro	500 Euro
Australia	80 Aus $	800 Aus $

जनवरी ☐ फरवरी ☐ मार्च ☐ अप्रैल ☐ मई ☐ जून ☐ जुलाई ☐ अगस्त ☐ सितम्बर ☐ अक्तूबर ☐ नवम्बर ☐ दिसम्बर ☐

नाम/Name पता/Address.....

.....

.....Pin Code..... Phone ..... E-mail :.....

सन्त वरियाम सिंह चैरिटेबल अस्पताल, रतवाड़ा साहिब

समय - सुबह 9.30 बजे से 2.00 बजे तक (रविवार से शुक्रवार)
डाक्टरों का समय - सुबह 10.00 बजे से 12.00 बजे तक
दूरभाष नं. 98786-95178, 92176-93845

डा. का नाम	विशेषज्ञ	दिन
1. डा. जसबीर कौर	जनरल मैडिसन	सोमवार
2. डा. गुरिंदर कौर कंग	एम. डी. (गाइनी)	सोमवार
3. डा. कुलदीप सिंह कंग	एम. डी. (आँखों के विशेषज्ञ)	सोमवार
4. डा. हरबंस सिंह	अस्थि रोग तथा जनरल मैडिसन	मंगलवार
5. डा. तेजिंदर सिंह	जनरल मैडिसन	मंगलवार
6. श्री माइकल जी	एक्स-रे विशेषज्ञ	मंगलवार तथा वीरवार
7. डा. जे. एस. गुजराल	जनरल मैडिसन/शिशु रोग विशेषज्ञ	मंगलवार तथा वीरवार
8. डा. आर. एस. संधू	अस्थि रोग तथा जनरल मैडिसन	वीरवार
9. डा. संतोष अनेजा	जनरल मैडिसन	वीरवार
10. डा. एस. के. बांसल	जनरल मैडिसन	शुक्रवार
11. डा. बरिन्दर सिंह	जनरल मैडिसन तथा त्वचा रोग विशेषज्ञ, एअरो स्पेस मैडिसन	शुक्रवार
12. डा. जिंदल	जनरल मैडिसन	रविवार
13. डा. गुरप्रीत कौर गिल	होम्योपैथिक	बुद्धवार
14. डा. कुलदीप कौर	दाँतों के विशेषज्ञ	मंगलवार

-: लैबोरेटरी टैस्ट तथा अन्य सुविधाएँ :-

1. खून टैस्ट, 2. सारे खून सैल काउंट टैस्ट 3. ब्लड शुगर टैस्ट, 4, किडनी टैस्ट, 5. लीवर टैस्ट, 6. लिपिड परोफाइल टैस्ट, 7. थायराइड टैस्ट, 8. हिमोग्लोबिन टैस्ट, 9. पेशाब टैस्ट, 10. स्टूल टैस्ट, 11. ई.सी.जी., 12. एक्स-रे (क्ष-किरण)

सारे लैबोरेटरी टैस्ट आधे शुल्क पर किये जाते हैं तथा मरीज को दवाई मुफ्त दी जाती है।

प्रत्येक रविवार को अस्पताल खुला रहेगा। समय 11.00 से 1.00 बजे तक। प्रत्येक शनिवार को अस्पताल बन्द रहेगा।

विश्व गुरमत रूहानी मिशन चैरिटेबल ट्रस्ट

के मुख्य संस्थापक प्यारे महापुरुष सन्त बाबा वरियाम सिंह जी द्वारा लिखित व प्रकाशित पुस्तकें

यह पुस्तकें श्री गुरू ग्रन्थ साहब जी के गूढ़ सिद्धान्तों को सरल रूप में स्पष्ट करके जिज्ञासुओं के समक्ष प्रस्तुत करती हैं। इनकी विषय वस्तु के रूप में नाम, सेवा व स्मरण की विधियों को प्रस्तुत करते हुए जन साधारण की भाषा का अत्यन्त सरल, मार्मिक व हृदयस्पर्शी प्रयोग किया गया है। यह दुर्लभ पुस्तकें, प्रत्येक जिज्ञासु व साधक के लिए एक अमूल्य निधि के रूप में हैं। अध्यात्मिक सुख व शान्ति प्राप्त करने हेतु आप इन्हें प्राप्त करके स्वयं पढ़ें तथा अन्य श्रद्धालुजनों को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करें। यह सभी पुस्तकें गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहब में आपकी सेवार्थ उपलब्ध हैं -

हिन्दी	
1. सुरति शबद मार्ग	70/-
2. किव कुड़ै तुटै पालि	35/-
3. बात अगंम की - सात भागों में	400/-
4. किव सचिआरा होइए - भाग पहला	35/-
5. किव सचिआरा होइए - भाग दूसरा	65/-
6. किव सचिआरा होइए - भाग तीसरा	100/-
7. होवै आनन्द घणा	30/-
8. बाबाणियाँ कहानियाँ	50/-
9. सुरतिआं उपजै चाउ	40/-
10. सर्व प्रिय गुरू गोबिंद सिंह जी	10/-
11. भक्त प्रहलाद	10/-
12. अमृत फुहार	10/-
13. अगम अगोचर का मार्ग	70/-
14. जपुजी साहिब सटीक	15/-
15. अमर ज्योतियाँ	15/-
16. अमर गाथा	100/-
17. वैशाखी	10/-
18. साजन चले प्यारिआ	10/-
19. अविनाशी ज्योति - भाग 1	90/-
20. रूहानी गुलदस्ता	70/-
21. चउथै पहरि सबाह कै	60/-

English Version	Price
1. Baisakhi	Rs. 5/-
2. How Rend The Veil of Untruth	Rs. 70/-
C. Discourses on the Beyond -1	Rs 50/-
4. Discourses on the Beyond -2	Rs. 50/-
5. Discourses on the Beyond -3	Rs. 50/-
6. Discourses on the Beyond -4	Rs. 60/-
7. Discourses on the Beyond -5	Rs. 60/-
8. The way to the imperceptible	Rs. 80/-
9. The Lights Immortal	Rs. 20/-
10. Transcendental Bliss	Rs. 70/-
11. How to Know Thy Real Self-(Vol-1)	Rs. 80/-
12. How to Know Thy Real Self-(Vol-2)	Rs. 80/-
13. How to Know Thy Real Self-(Vol-3)	Rs. 110/-
14. The Dawn of Khalsa Ideals	Rs. 10/-
15. A Glimpse of His Holiness - Baba ji	Rs. 5/-
16. Divine Word Contemplation Path	Rs. 150/-
17. The Story of Immortality	Rs. 260/-
18. Why not Contemplate the Lord	Rs. 200/-

ऊपरलिखित पुस्तकें आप जी मनीआर्डर, चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा रतवाड़ा साहिब से मंगवा सकते हैं या ट्रस्ट के अकाउंट में राशि जमां करवा कर मोबाइल नं. 9417214391, 9592009106, 9417214379 पर सूचित कर सकते हैं। **Bank Name : Pb & Sind Bank, A/c Name. VGRMCT/Atam Marg Magazine, S/B A/C No. 12861000000003, RTGS/IFSC Code - PSIB0021286, Branch Code - C1286**

सन्त बाबा हरपाल सिंह जी अमेरिका की रूहानी प्रचार फेरी के दौरान
Gurdwara Sikh Centre, Seattle(U.S.A) में कीर्तन करते हुए

ब्रह्मलीन बाबा सतनाम सिंह अटवाल जी की पावन स्मृति में उनके गृह सैनहोजे (अमेरिका) में
आरम्भ करवाए गए श्री आखण्ड पाठ साहिब के भोग के समय दिनांक 12 मई को एकत्र हुआ विशाल जन समूह।

पूजा अकाल की पर्चा शबद का दीदार खालसे का

गुरमति समागम क्षेत्र श्री आनन्दपुर साहिब

द्वारा : सन्त बाबा हरपाल सिंह जी – वर्तमान वाइस चेयरमैन (फाउण्डर ट्रस्टी)
विश्व गुरमति रूहानी मिशन चैरिटेबल ट्रस्ट, रतवाड़ा साहिब

महान रूहानी सालाना सत्संग समागम

दिनांक	महीना	नगर	दिन	समय
21-22	मई	मजारा	मंगलवार-बुद्धवार	रात्रि 7.00 से 10.30
25-26	मई	अजौली	शनिवार-इतवार	रात्रि 7.00 से 10.30
26	मई	जिन्दवड़ी	इतवार	प्रात 10.00 से 12.00
29-30	मई	भट्ठों	बुद्धवार-वृहस्पतिवार	रात्रि 7.00-10.30
1-2	जून	मांगेवाल	शनिवार-इतवार	रात्रि7.00-10.30
8-9	जून	मौजोवाल	शनिवार-इतवार	रात्रि 7.00-10.30

इसके अतिरिक्त प्रत्येक माह की चढ़ती पूर्णमाशी नवनिर्मित स्थान सन्त बेला रामगढ़, पट्टी टेक सिंह (श्री आनन्दपुर साहिब) में रात्रि 7.00 बजे से 11.00 बजे तक मनाई जाती है, जिसकी तारीखें इस प्रकार हैं –

16 जून, 15 जुलाई, 14 अगस्त, 13 सितम्बर, 12 अक्टूबर, 11 नवम्बर, 11 दिसम्बर 2019

✚ सन्त माता रणजीत कौर पॉली क्लीनिक ✚

ट्रस्ट रतवाड़ा साहिब की ब्रांच 'सन्त बेला रामगढ़' (श्री आनन्दपुर साहिब) में जनवरी 2018 से पॉली क्लीनिक चलाया जा रहा है, जिसका समय प्रतिदिन प्रातः 9.00 बजे से 12.00 बजे तक होता है। प्रत्येक प्रकार की बीमारी की रोकथाम के लिए बहुत ही माहिर डाक्टर साहिबान चण्डीगढ़ से आकर चेक-अप करके निःशुल्क दवाइयाँ देते हैं।

प्रबन्धक: क्षेत्रीय निवासी साधु संगत, अन्य जानकारी हेतु सम्पर्क नम्बर – 94178-76243

सन्त महाराज रतवाड़ा साहिब वालों के जन्म दिवस सम्बन्धी

गुरमति रूहानी समागम

17 जून

समय

प्रातः 10.00 बजे से
सायं 4.00 बजे तक

सन्त बाबा वरियाम सिंह जी महाराज
रतवाड़ा साहिब

रतवाड़ा साहिब

आत्म मार्ग के समस्त पाठकों तथा संगत को, समागम में पहुँचने के लिए हार्दिक निवेदन

अत्यन्त आवश्यक निवेदन

आत्म मार्ग एक विशुद्ध धार्मिक पत्रिका है, इसमें धन्य श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी महाराज की वाणी प्रकाशित की गई होती है तथा सिक्ख इतिहास से सम्बन्धित गुरुओं व गुरसिक्खों की फोटोएँ होती हैं, इसलिए कृप्या इसे रद्दी कागज के तौर पर न तो प्रयोग में लाया जाए और न ही बेचा जाए। यदि आप पुरानी पत्रिकाओं को अपने पास नहीं रखना चाहते हैं तो आप उसे अपने रिश्तेदार या मित्र को दे सकते हैं या फिर अपने गाँव अथवा शहर के गुरुद्वारा साहिब की गोलक पर रख सकते हो ताकि वहाँ से कोई गुरुमुख प्यारा उसे वहाँ से ले जाकर उसके माध्यम से गुरमति रूहानी मार्ग दर्शन हासिल कर सके। इस प्रकार से तुम्हारा भी भला हो जाएगा। यदि ऐसा कर पाना सम्भव न हो तो जो प्रेमीपुरुष आपके घर इस पत्रिका को पहुँचाने की सेवा करता है उसके पास सम्पर्क करके आप उसे भी इन पत्रिकाओं को दे सकते हैं अथवा अधोलिखित सम्पर्क नम्बरों पर सम्पर्क करके आप सीधे आत्म मार्ग के कार्यालय में भी इन पत्रिकाओं को भेज सकते हो –

9417214391, 8437812900